निफ़ाक़

(सूरह मुनाफ़िक़ून की रोशनी में)

डा. इसरार अहमद

अनुवाद–

डॉ. रफ़ीक़ अहमद

निफ़ाक़

सूरह मुनाफ़िक़ून की रोशनी में

'निफ़ाक़ की हक़ीक़त' उस का सबब और उसके दरजात

सूरह सफ़्फ़ और सूरह जुमा के बाद मुतालाए क़ुरआन हकीम के हमारे इस मुन्तख़ब निसाब के हिस्सा चार का आख़िरी दर्स सूरह मुनाफ़िक़ून पर आधारित है। हुस्ने इत्तेफ़ाक़ से ज़ेरे नज़र मुन्तख़ब निसाब में भी यही सूरतें इसी तरतीब से शामिल की गयी हैं जिस तरतीब से यह क़ुरआन हक़ीम में वारिद हुई हैं, यानी पहले सूरह सफ़्फ़ फिर सूरह जुमा और फिर सूरह मुनाफ़िक़ून। इस तरतीब में बड़ी मअनवियत पिन्हा है' इस लिए कि निफ़ाक दर हक़ीक़त नतीजा है जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह से कन्नी कतराने और उस से दामन बचाने का। यही वजह है कि निफ़ाक़ की हक़ीक़त 'उसका अस्ल सबब' 'उसका नुक़्तए आग़ाज़' 'उसकी अलामत' 'उसके मदारिज व मरातिब' उसकी हलाकत खेज़ी और उसके साथ–साथ उससे बचने की तदाबीर' बल्कि कहीं अगर उसकी छूत लग गई हो तो उसके इलाज और मुआलजे की तदाबीर', इन बहुत से विषयों पर आधारित यह सूरह क़ुरआन में भी सूरह सफ़्फ़ और सूरह जुमा के बाद वारिद हुई है और हमारे इस मुन्तख़िब निसाब में भी यह तीनों सूरतें इसी तरतीब से शामिल हैं।

<u>मुनाफ़िक़ीन की दो क़िस्में –</u>

इससे पहले कि सूरह मुनाफ़िक़ून की आयात का सिलसिलेवार मुतालेआ शुरू किया जाए, मुनासिब होगा कि पहले उसूली तौर पे यह समझ लिया जाये कि निफ़ाक़ अस्ल में है क्या! गोया की अब चन्द बातें हक़ीक़ते निफ़ाक़ से मुताल्लिक अर्ज़ की जाएगीं।

निफ़ाक़ के बारे में यह बात तो मालूम और मारूफ़ है कि मुनाफ़िक़ उसे कहते है जिस के दिल में ईमान न हो लेकिन वह ईमान का दावेदार और इस्लाम का दावेदार हो ' गोया वह अपने आप को मुसलमानों में शामिल कराता हो 'हालांकि उसका दिल नूरे ईमान से ख़ाली हो। ये बात यक़ीनन सही है 'लेकिन उस के बारे में ये आम तसव्वुर जो लोगों में पाया जाता हे कि मुनाफ़िक़ सिर्फ वही होता है कि जो इब्तिदा ही से धोखेऔर फ़रेब की नियत के साथ इस्लाम में दाख़िल हो ' गोया कि उसे कभी ईमान की कोई झलक सिरे से नसीब ही न हुई हो ' ये बात पूरे तौर पर दुरूस्त नही है। इस क़िस्म के मुनाफ़िक़ भी यक़ीनन पाए जाते थे लेकिन ऐसा मामला कम था। क़ुरआन मजीद में यहूद की एक साज़िश का ज़िक्र है कि जब उन की सारी मुख़ालिफ़तों के बावजूद और तमाम शरारतों और साज़िशों के बावजूद मदीने में इस्लाम की जड़ें गहरी होती चली गईं और नबी अकरम सल्ल0 को अल्लाह तआला ने मदीना मुनव्वरा में ग़लबा अता फरमा दिया तो उन्होनें इस्लाम की क़ूव्वत को कमज़ोर करने के लिए एक तदबीर सोची। उन्होंने देखा कि इस्लाम की यह साख अरब समाज में क़ायम हो चुकी है कि जो शख्स एक बार ईमान ले आता है वह वापस नहीं फिरता' चाहे ईमान क़ुबूल करने के नतीजे में उसे कितनी ही तकलीफें बरदाश्त करनी पड़ीं और कैसी ही मुसीबत झेलनी पड़ीं। इस साख को खत्म करने के लिए उन्होने यह साज़िश तेयार की कि सुबह के वक्त ईमान लाने का एलान करो और शाम को इन्कार कर दो और मुर्तद हो जाओ। अपने पुराने दीन में वापसी का एलान कर दो। इस तरह उम्मीद की जा सकती है कि कुछ और लोग भी लौट आऐं', अपने पूर्वजों दीन की तरफ पलट आऐं। आम लोग ये सोचने पर मजबूर होंगे कि आख़िर ये लोग दायरे इस्लाम में दाख़िल हुए थे' अन्दर जाकर उन्होंने ज़रूर कोई ऐसी ग़ैर मुनासिब बात देखी होगी जिस से बिदक कर ये लोग

वापस लौट आए' मुमकिन है जिस उम्मीद में ये इस्लाम में गए थे उस के विपरीत कोई सूरत वहाँ नज़र आई हो कि उन्हें लौटना पड़ा!,,,,,,,, ईमान की साख को ख़त्म करने के लिए यहूद ने ये तदबीर इख़्तियार की। अब ज़ाहिर बात है कि उस कैफियत के साथ जो शख़्स भी इस्लाम के दायरे में दाख़िल हुआ उस ने अगर्चे कल़मा शहादत ज़ुबान से अदा किया होगा लेकिन उस का ये दाख़ला इब्तिदा ही से धोके के तहत है' ईमान की कोई किरन उसे किसी एक लम्हे के लिए भी हासिल नहीं हुई। ऐसे किसी शख़्स ने एक दो दिन अगर इस क़ानूनी इस्लाम की कैफियत में बसर किए तो यक़ीनन एक ख़ालिस मुनाफिक़ की हैसियत से बसर किए हैं।

इस तरह का मामला बाद में भी हो सकता है कि कोई शख़्स मुसलमानों में जासूस की हैसियत से शामिल होने के लिए इसी क़िस्म के किसी अन्दाज़ में इस्लाम में दाखिल हो' और क़लिमा–ए–शहादत ज़ुबान से अदा करे तो ईमान से बिल्कुल महरूम होने के बावजूद भी क़ानूनी तौर पर वह मुसलमान हो जाएगा। और ऐसा शख्स तो ज़ाहिर बात है कि दीनी अलामतों का एहतेराम भी आम मुसलमान से ज़्यादा करेगा',अपने आप को मुसलमान मनवाने के लिए वह नमाजें भी पढ़ेगा' रोज़े भी रखेगा' लेकिन उस शख़्स के क़ल्ब की कैफ़ियत के बारे में हर शख़्स जानता है कि एक लम्हे के लिए भी उसे कभी ईमान की रोशनी नसीब नही हुई। तो अगर्चे इस क़िस्म का निफ़ाक़ भी दौरे नबवी सल्ल0 में मौजूद था लेकिन अधिकतर जिस क़िस्म के निफ़ाक़ का ज़िक्र हमें कुरआन मजीद में मिलता है उस की शक्ल उस से मुख़तलिफ थी।

निफ़ाक़ का अस्ल सबब–

उस निफ़ाक़ की अस्ल हक़ीक़त को समझने के लिए जो दौरे नबवी सल्ल0 में आमतौर पाया जाता था और जिस का कुरआन हकीम में कसरत

से ज़िक्र मिलता है' ये बात पेश नज़र रखिये कि इन्सान अपनी कुव्वते इरादी के ऐतबार से मुख़तलिफ़ कैफ़ियत और मुख़तलिफ दर्जों के होते हैं। ऐसे लोग भी होते हैं जो किसी नज़रीये या मसलक को बिला ख़ोफ व ख़तर कुबूल करते हें।

हर चै बादाबाद माकश्ती दर आब अन्दा अख़तीम

कि हम ने कश्ती दरिया में डाल दी है अब जो हो सो हो। तारिक़ बिन ज़ीयाद (रह0) ने जिस की आख़िरी मिसाल क़ायम की कि।

तारिक़ चो बर किनारे उन्दुलुस सफीना सोख़्त

स्पेन के साहिल पर पहुँच कर कश्तियाँ जला डालीं कि वापसी का ख्याल भी कभी न आए। इस मिज़ाज के हामिल लोग हर दौर में दुनिया में मौजूद रहे है' कभी कम और कभी ज़्यादा' लेकिन एक दूसरे मिज़ाज के लोग भी दुनिया में रहे हैं और हमेशा रहेंगे जिन्हें हम कमज़ोर तबीअत के हामिल लोग या कमज़ोर कुव्वते इरादी के मालिक लोग क़रार देते हैं कि एक ख़ास रास्ते पर चलना चाहता है' लेकिन अपनी कम हिम्मती के बाइस चल नहीं पाता। उस राह में दरपेश मुश्किलात व रूकावटें और सख़्तियों और आज़माइशों के मुक़ाबले में क़दम क़दम पर उन की हिम्मत जवाब देती नज़र आती हैं' उन का जोशे अमल सर्द पड़ता है' वह आगे बढ़ने के बजाये किसी एक मुक़ाम पर खड़े के खड़े रह जाते हैं या कभी लौटने के इरादे से चन्द क़दम पीछे हटते हैं तो फिर अगर कोई आसान सूरते हाल सामने आए तो दो चार क़दम आगे बढ़ा लेते हैं' हालात की सख़्ती अगर बर क़रार रहे तो बिल आखिर उन में से बाज़ के क़दम पीछे ही हटते चले जाते हैं। ये दोनों तरह के मेज़ाज़ हमेशा पाये गये हैं और आइन्दा भी पायें जायें गें।

ये बात ज़हन में रखिए कि मक्की दौर में जो लोग ईमान लाए उन की ग़ालिब अक्सरियत उन लोगों पर आधारित थी जो इस्लाम और पैग़म्बरे

इस्लाम सल्ल0 की सच्चाई को पूरी तरह क़लबी व ज़हनी तौर पर क़ुबूल करने के बाद ईमान लाए थे। कलिमा शहादत ज़ुबान से अदा करने से पहले ही वह हर मुसीबत को झेलने के लिए तैयार और हर क़ुरबानी देने के लिए तैयार हो चुके होते थे। इस लिए की उन्हें मालूम था कि इधर हम ने ये अल्फ़ाज़ ज़ुबान से निकाले उधर मुसीबतों के पहाड़ हम पर टूट पड़ेंगे' घर में और घर के बाहर हर जगह मुश्किलात' तकालीफ़ और ज़्यादतियों का सामना होगा', लेहाज़ा जो आता ख़ूब सोच समझ कर इस्लाम की तरफ आता। लेकिन ये सूरते हाल बाद में बरक़रार न रही। मदनी दौर के इब्तिदाई दो एक साल के बाद हालात तेज़ी से बदलने लगे। मदीना मुनव्वरा में अल्लाह तआ़ला ने नबी अकरम सल्ल0 को इक़्तिदार यानी ग़ल्बा अता फरमा दिया', औस और खज़रज ही मदीना के दो बड़े क़बीले थे' दोनों ईमान ले आए' गोया आप मदीना मुनव्वरा के बे ताज बादशाह हो गए। अब ये बात नहीं रही कि जो ईमान लाए उस को ज़ुल्म और ज़्यादती से साबक़ा पेश आता हो' लेहाज़ा कुछ कमज़ोर लोगों ने भी हिम्मत की और हालात को मुनासिब देखते हुए इस्लाम क़ुबूल कर लिया। स्पष्ट रहे कि ये लोग भी इस्लाम की दावत से प्रभावित हो कर दाएरे इस्लाम में दाख़िल हुए थे' उन के दिल ने भी ये गवाही दी होगी कि क़ुरआन अल्लाह का कलाम है और उस की तालीमात इन्सानी फ़ितरत की शहादतों से मेल खाती' इस लिए की अल्लाह पर ईमान लाना ओर उस की तौहीद का इक़रार करना फ़ितरते इंसानी में शामिल है। इसी तौर पर फ़ितरते इंसानी इस बात का भी तक़ाज़ा करती है और अक़्ल इस हक़ीक़त को क़बूल करती है कि आमाले इंसानी के भर पूर नताइज निकलने चाहिए' ''इन्साफ का तराज़ू'' होना चाहिए और उस के मुताबिक़ जज़ा व सज़ा होनी चाहिए। हश्र व नश्र और जन्नत व दोज़ख़ उन सब हक़ीकतों को ज़ेहन क़ुबूल करता है। उसी तरह नबी अकरम सल्ल0

की सीरत व किरदार और एक चमकतें हुए सूरज की तरह आप सल्ल0 की शख्सियत भी लोगों के सामने थी और आप सल्ल0 की सच्चाई की गवाही भी लोगों के दिल की गहराइयों से फूटती थी' चुनांचे लोग आए' और ईमान कुबूल कर लिया। लेकिन जैसे जैसे ईमान के अम्ली तक़ाज़े सामने आने लगे' जान और माल खपाने के मुतालबे शिद्दत पकड़ने लगे तो कमज़ोर इरादा और कम हिम्मत लोगो के लिये इस्लाम और ईमान के रास्ते पर चलना मुश्किल होता गया। सूरहसफ़्फ़ की आख्री आयत ज़हेन में लाइये! अल्लाह के दीन के ग़ल्बे के लिये नबीये अकरम (सल्ल0) की नुस्रत का और मदद का मुतालबा किस ज़ोरदार अन्दाज़ में आया है :

अल्लाह की राह में जान व माल खपाने की पुरज़ोर मांग पर आधारित सूरह सफ़्फ़ की आयत 10 और 11 को भी ज़हेन में लाइये :

और पीछे चलिये सूरह हुजरात की आयत 15 हम पड़ आये हैं जिस में जिहाद फी सबीलिल्लाह को ईमान का लाज़िमी तक़ाज़ा क़रार दिया गया :

ये तक़ाज़े निहायत कठिन है' जान और माल दोनों इन्सान को बहुत प्यारे है' बल्कि कभी कभी इन्सान का मिज़ाज ये बन जाता है कि जान चली जाए' माल न जाए। चुनांचे ऐसे कमज़ोर तबियत के हामिल लोगो को दुनिया और उसके मज़े छोड़ कर ज़िहाद व क़िताल के रास्ते पर चलना बहुत मुश्किल मालूम होता' बक़ौल जिगर मुरादाबादी :

तपती राहें मुझको पुकारे
दामन पकड़े छाँव घनेरी

दो स्पदर मिसालें

ऐसे लोगों के लिए सूरह हज में बड़ी प्यारी मिसाल आई हुई। फरमायाः कि कुछ लोगों में से कुछ ऐसे भी हैं जो किनारे रह कर अल्लाह की बन्दगी करना चाहते हैं। एक वह है जो बिला ख़ौफों ख़तर

नारा लगा कर मंझधार में कूदने के लिए तैयार है और एक वह है जो किनारे किनारे चलना चाहता है, जान और माल को बचा बचा कर रखना चाहता है' अगर्चे

आसूदह साहिल तो है मगर शायद ये तुझे मालूम नहीं
साहिल से भी मौजें उठती हैं ख़ामोश भी तूफ़ाँ होते हैं

के मिसदाक़ किनारे पर भी इंसान पर कोई मुसीबत आ सकती है। लेकिन बहर हाल मंझधार के मुक़ाबले में दरिया का किनारा आराम व आसाइश और आफ़ियत का एक गोशा है। इसी मज़मून को आगे बढ़ाते हुए फ़रमाया कि अगर उसे ख़ैर पहुँचता रहे' सहूलतें मिलती रहें तो मुतमईन रहता है। और अगर कोई आज़माइश आ पड़ी' कोई कठिन मरहला दरपेश हुआ या जान और माल के लगााने का कोई तक़ाज़ा सामने आया तो फिर व औंधें मुँह गिर कर रह जाता है। फ़रमाया ये दुनिया और आख़िरत दोनों का ख़सारा है। ऐसे शख़्स की दुनिया भी बरबाद हुई और आख़िरत भी। ये है वाज़ेह और खुला ख़सारह और बड़ा नुकसान।

यही मज़मून सूरह बक़रः के दूसरे रूकू में भी आया है। वहाँ तीन क़िस्म के इंसानों का ज़िक्र हुआ है। एक वह मुत्तक़ी और परहेज़गार लोग जो क़ुरआन हकीम से सही तौर पर फासदा उठाने के अहेल हैं। दूसरे वह लोग जिन की मुसलसल हठ धर्मी और ज़िद के बाइस उन के दिलों में मोहरें लग चुकी हैं और क़ुरआन की हिदायत अब उन के हक़ में हर्गिज़ मुफीद नहीं। तीसरा तबक़ा उन दोनों बीच बीच का है। आयत 8 में उन का तज़किरा हैः कि लोग ऐसे भी हैं जो मुद्दई हैं उसे इस बात के कि हम ईमान ले आए अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर इन हालांकि वह मोमिन नहीं हैं। ज़रा आगे चल कर उसी दूसरे रूकू में उन के लिए एक मिसाल बयान की गईः
ये एक तमसील है। रात का वक़्त है' मूसला धार बारिश हो रही है'

बादलों की घन गरज और बिजली की कड़क और चमक ने माहौल को भयानक बना दिया है', कुछ कम हिम्मत और बुज़दिल लोग उस तूफ़ान में घिरे हुए हैं। कड़क से उन की जान निकल जा रही है। अपने कानों में अगुँलियां ठूंसे हुए वह ख़ौफ व दहशत की तसवीर बने खड़े हैं। जैसे ही बिजली की चमक से माहौल थोड़ी देर के लिए रोशन होता है तो हिम्मत कर के दो चार क़दम आगे बढ़ जाते हैं। और जब माहौल फिर अंधकार मय हो जाता है तो खड़े के खड़े रह जाते हैं।

निफाक़ का आग़ाज़

इस मिसाल में एक खास इंसानी किरदार का मुकम्मल नक़्शा मौजूद है। हालात मुनासिब और मुवाफिक़ हुए तो ईमान और इस्लाम के रास्ते पर चलते रहे' लेकिन जब आज़माइशों का वक़्त आया' जहाँ और क़िताल फी सबीलिल्लाह की कड़क और घन गरज सुनाई दी' जान व माल की कुर्बानी का कठिन मुतालबा सामने आया तो ठिठक कर खड़े हो गए' हिम्मत टूट कर रह गई। ये कैफ़ियत दर हक़ीक़त निफाक़ की बीमारी का आग़ाज़ है। ये उस भयानक मर्ज़ का starting point है। हां ये बात समझ लेनी चाहिए कि इस कैफियत के इब्तिदाई मर्हले को क़ुरआन निफाक़ क़रार नहीं देता। निफाक़ से पहले एक पहले एक मन्ज़िल कमज़ोर ईमान की है कि ईमान अभी उस दर्जे पुख़्ता नहीं हुआ कि इंसान का अमल पूरे तौर पर उस के अधीन हो सके। चुनांचे अमल में भी कमी और कोताही घटित होता रहता है' लेकिन कमज़ोर ईमान की उस कैफियत का ये एक लाज़िमी अम्र है कि इंसान अपनी ग़लती का एतराफ़ करता है' झूठे बहाने बनाता बल्कि अपनी ग़लती और कोताही को साफ़ तसलीम कर लेता है', अल्लाह तआला से माफी का तलबग़ार होता है' नबी सल्ल0 से भी माज़रत करता है और गुज़ारिश करता है कि मेरे लिए अल्लाह से इस्तिग़फार कीजिए। जब तक येसूरत बरक़रार है

उसे निफाक़ नहीं कहा जाएगा बल्कि उसे कमज़ोर ईमान से ताबीर किया जाएगा। लेकिन उस से अगला क़दम ये है कि इंसान अपनी कमज़ोरियों पर परदे डालने लगे' झूटे बहानों को अपनी बे अमली के लिए आड़ और ढाल के तौर पर इस्तेमाल करने लगे' तो यहाँ से यूँ समझिये कि निफाक़ की सरहद शुरू हो गई' मर्ज़े निफ़ाक़ के पहले मरहले का आग़ाज़ हो गया।

निफ़ाक़ एक रोग है

जिस तरह ये बात आम तौर पर मशहूर है कि टी0 बी0 की तीन stages होती हैं' इसी तरह ये जान लीजिए कि मर्ज़े निफाक़ के भी तीन दर्जे या तीन मर्हले हैं। और ये अजीब बात है कि क़ुरआन मजीद ने निफ़ाक़ को भी एक रोग और मर्ज़ क़रार दिया है। सूरह बक़रः के दूसरे रूकू में फरमायाः ''उन के दिलों में एक रोग है' पस अल्लाह ने उस रोग को बढ़ा दिया''––– और ये अल्लाह तआला की मुस्तक़िल सुन्नत और तयशुदा कानून है कि अगर तुम हिदायत की तरफ़ आओगे तो तुम्हारी हिदायत में इज़ाफ़ा होता चला जाएगा और अगर गुमराही का रास्ता इख्तियार करोगे तो गुमराही और ज़लालत के रास्ते खुलते चले जाएगे। बेहयायी की तरफ अगर तुम रूख करोगे तो बेहयायी के कामों में बढ़ते चले जाओगे। जिन घरानों के बारे में आज से पचास साल पहले ये कल्पना भी नहीं की जा सकती थी कि उन की औरतों की कोई झलक कभी कोई देख पाएगा' जो हफ़ीज़ के इस शेअर का मिस्दाक़ कामिल थे कि

''चश्मे फलक़ ने आज तक देखी न थी उन की झलक

अब उन्हीं घरानों की बेटियां और पोतियां तक़रीबन बेहयायी के लिबास में सड़कों पर चलती फिरती नज़र आती हैं। ये सब कुछ धीरे धीरे हुआ है। एक बुराई अगली दस बुराईयों की राह खोलती है। तो अल्लाह की सुन्नत और उस का तरीक़ा यही है कि हिदायत की तरफ आओगे तो वह

उस के रास्ते खोल देगा, बुराई की तरफ जाओगे', बे हयाई का रास्ता इख़्तियार करोगे तो उस में आगे बढ़ते चले जाओगे' अल्लाह तआला उस रास्ते को तुम्हारे लिए आसान बना देगा, इसी तरह बग़ैर निफ़ाक़ का रास्ता इख़्तियार करोगे तो उसी राह में बढ़ते चले जाओगे। यही वह हक़ीक़त है जिस का ज़िक्र उस आयत मुबारका में हैः

मर्ज़े निफ़ाक़ के तीन दरजे

तो आइये कि अब हम देखें कि निफाक़ के तीन दर्जे कौन – कौन से हैं। पहला दर्जा या पहली stage ये है कि इंसान पहले अमली कोताही और ग़लत रवइये पर परदा डालने के लिय झूठ का सहारा लेना शुरू करदे। हदीसे नबवी (सल्ल0) में भी मुनाफिक़ की निशानियों में झूठ का बतौर खास ज़िर्क मिलता है। फरमायाः "मुनाफिक़ की तीन निशानियों हैं" और पहली निशानियाँ आप (सल्ल0) ने ये बयान फरमायी : कि जब बोले झूठ बोले। ये उस की वाज़ेह अलामत है। तो झूठ बोल कर और झूटे बहानों के ज़रिये अपनी कोताही और अपनी ग़लती पर परदा डालने की कोशिश करना मर्ज़े निफाक़ का पहला दरजा है।

फिर उस झूठ बयानी और लफ्फाज़ी में जब झूठी क़िस्मों का इज़ाफा होता है तो अब गोया या इस मर्ज़ के अगले मर्हले का आग़ाज़ है। सूरत उल मुनाफ़िक़ून में आप देखेंगे कि उसी मज़मून से सूरत का आग़ाज़ हुआ हैः ''(ऐ नबी सल्ल!) जब ये मुनाफिक़ीन आप की ख़िदमत में हाज़िर होते हैं तो गवाही देते हैं कि आप सल्ल0 अल्लाह के रसूल हैं''––– इसी सिलसिला मज़मून में आगे ये अल्फाज़ आएः कि उन मुनाफिक़ीन ने अपनी क़िस्मों को अपने लिए ढाल बना लिया है।

एक अहम नफ़्सियाती हक़ीक़त

तीसरा मर्हला उस के बाद है' लेकिन उसे समझने के लिए एक

अहम नफ़सीयाती हक़ीक़त का जानना बहुत ज़रूरी है। ये एक आम नफ़सीयाती हक़ीक़त है कि अगर आप अमल के मैदान में पीछे रह गए हों तो वह लोग आप को एक आँख नहीं भाते जो अपनी हिम्मत के बदौलत आप के आगे निकल गए हों। आप की ख़्वाहिश ये होगी कि वह भी पीछे रह जाए' इस लिए कि उन के आगे बढ़ने ने हमारी कमज़ोरी को मज़ीद वासेह कर दिया। अगर हम सब के सब खड़े रहे जाते और कोई भी हिम्मत और साहस का प्रदर्शन न करता तो सब के सब एक ही दरजे में आ जाते। नतीजे के बैर पर उस से उनकी हिम्मत लोगों के दिलों में उन मोमिनीन और सादेक़ीन के लिए कि जो ग़ल्बा व अक़ामते दीन के लिए जान और माल की बाज़ियाँ खेल रहे होते हैं' नफ़रत और दुश्मनी के जज़बात पैदा हो जाते हैं। उन लोगों के खिलाफ दुश्मनी के जज़बात सीनों में परवान चढ़ने लगते हैं जो ईमान के तक़ाज़ों के जवाब में आगे बढ़कर उस शान से लब्बैक कहने वालों में हो कि अगर माल का मुतालबा है तो तो है हाज़िर है' जान का तक़ाज़ा है तो हाज़िर हैं। सच्चे अहले ईमान और उन की सरफरोशियों के खिलाफ अगर ये एहसासात अैर जज़बात पैदा होने लगें तो जान लीजिए कि ये मर्ज़े निफ़ाक़ की वह तीसरी और आखिरी मन्ज़िल है जो न क़ाबिले इलाज है। अब इस मर्ज़ से छुटकारे की कोई सूरत मौजूद नहीं! तो ये है, दर हक़ीक़त निफाक़ का नुक़्ते आग़ाज़, उस का असल सबब और उस भयानक मर्ज़ के मुख़्तलिफ मर्हले व दर्जे हैं। अल्लाह तआला हमें निफ़ाक़ की हर सूरत से महफूज़ रखे। आमीन!

लफ़्ज़ "निफ़ाक़" की लुग़वी बहेस

यहाँ ये भी समझ लेना चाहिए कि निफाक़ के लफ़्ज़ी मायने क्या है! जैसा कि कई मर्तबा अर्ज़ किया जा चुका है' अकसर अरबी अलफ़ाज़ का एक से तीन हरफी मादद्ह होता है। लफ़्ज़ निफाक़ का मादह "नून फ़े क़ाफ" है।

अरबी ज़बान में उस के दो बुनियादी लुग़वी इस्तेमालात हैं और दोनो के एतेबार से क़ुरआन मजीद की दो बिल्कुल मुख्तलिफ़ इस्तेलाहात(Terms) वजूद में आई हैं'। अगरचे उन दोनों में एक बड़ा ताल्लुक़ है' जिस की तरफ़ बाद में इशारा होगा। उस मफ़हूम को अदा करने के लिए बोला जाता है कि घोड़ा मर गया' जैसे हम कहते हैं मर खप गया––का मायने है पैसे खत्म हो गए। उसी माददह से बाबे इफ़आल में लफ्ज़ '' इन्फ़िाक़ ''बना है, यानी ख़र्च कर देना' खपा देना' लगा देना। इन्फिाक़ फी सबीलिल्लाह का मफहूम होगा अल्लाह की राह में लगा देना' खपा देना' खर्च कर देना' सर्फ कर देना। हमारे इस मुन्तख़ब निसाब में ये लफ्ज़ सूरह तग़ाबुन में आ चुका है'' और खर्च करो' उसी में तुम्हारे लिए बेहतरी है''। यानी अल्लाह की राह में खर्च करना और लगा देना ही तुम्हारे हक़ में ख़ैर और भलाई है। और उसी सिलसिले में तालीम दी गई कि अपना बेहतर से बेहतर माल खर्च करोः कि तुम नेकी को हासिल न कर सकोगे' नेकी के मर्तबे तक न पहुँच पाओगे जब तक किखर्च न करो वह चीज़ तो तुम्हें महबूब है। ओर फरमाया गया कि जब तक कि जी के उस लालच से छुटकार हासिल न करोगे फ़लाह न पाओगे। सूरह तग़ाबुन में इन्फ़िाक़ के हुक्म के फौरन बाद फरमायाः और जो कोई जी के लालच से बचा लिया गया तो फ़लाह तक पहुँचने वाले सिर्फ वही लोग हैं'' चुनांचे एक ये इस्तिलाह ''इन्फ़िाक़''है जो ''ननू फे क़ाफ''के माद्दे से निकाली की गई है।

अब उसी माद्दे से निकली हुई दूसरी इस्तिलाह की तरफ आइये! ''नफ़क़'' बतौरे ''इस्म'' एक और मायने में आता है। उस के माने हैं ''सुरंग''। चुनांचे सुरह अनआ़म में ये अल्फाज़ आये हैं।

कि ऐ नबी सल्ल0! ये काफिर और मुश्रिक आप से जिस क़िस्म के मोजज़ात और चमत्कार का मुतालबा कर रहे है' अल्लाह की हिक्मत उन के ज़हूर की मुताक़ाज़ी नहीं है' अल्लाह का फ़ैसला है कि उस क़िस्म के

मोजज़ात उन का नहीं दिखाए जायेगें ––– लेकिन अगर आप पर इन का ये एराज़ व इंकार बहुत शाक़ गुज़र रहा है तो अगर आप के लिए मुमकिन है तो कहीं ज़मीन में से कोई सुरंग लगा कर या आसमान पर सीढ़ी लगा कर उन की मतलूबा निशानियों में कोई निशानी उन्हें लाकर दिखा दीजिए! उसी ''नून फे क़ाफ '' से एक और लफ्ज़ बना है। अरबी ज़बान में '' नाफेक़ा '' गोह के बिल को कहते हैं। अल्लाह तआ़ला ने जानवरों को कुछ न कुछ शअ़ूर व समझ बख़्शा है। गोह एक हक़ीर सा जानवर है' लेकिन उस में अपनी हिफाज़त का माद्दह इतना क़वी है कि वह अपना बिल सुरंग की तरह बनाता है जिस के दो मुँह होते हैं' ताकि कोइ अगर शिकारी कुत्ता किसी एक रूख़ से दाखिल हो तो वह अपनी जान बचाने के लिए दूसरे मुँह से निकल भागे और अगर उधर से कोई खतरा होतो इधर से निकलने को कोई सबील रह जाए। यही लफ़्ज़ मुनाफिक़त की बुनियाद है जिस पर कि कुरआन मजीद की ये इस्तिलाह आधारित है।

मुनाफक़त क्या है ?

सरसरी मफ़हूम में मुनाफिक़ वह है जिस के दो रूख हैं। वह ईमान से भी एक ताल्लुक़ रखता है और कुफ्र से भी। चुनांचे मुनाफिक़ीन के बारे में फ़रमाया गयाः कि जब अहल ईमान से मिलते हैं तो कहते हैं कि हम भी साहबे ईमान हैं', हम भी ईमान लाए हैं। और जब अपने शैतानों यानी अपने सदारों से मिलते हैं तो उन से कहते हैं कि हम तुम्हारे साथ ही हैं' मुसलमानों से तू हम मज़ाक कर रहे हैं' उन का मज़ाक़ उड़ा रहे हैं' हमारा ईमान का दावा महेज़ मज़ाक और दिल लगी के सिवा कुछ नहीं।

मुनाफिक़ों की इस नफसीयाती कैफियत को सूरह निसा में इस तरह बयान फरमाया गयाः कि ये लटककर कर रहे गए हैं' न इधर केन्द्रित हैं न उधर केन्द्रित। (आयत – 143)

ये दो रूखापन और दो जानिब तअल्लुक़ रखने का तर्ज़ अमल दरअसल इन्सान अपनी हिफाज़त अपनी जान और माल के बचाओ और अपनी दुनिया को किसी ने किसी तौर से बचा लेने के लिये इख्तियार करते हैं कि किसी तरफ़ भी अपने आप को मुकम्मल तौर पर identify न करे। एक ताल्लुक़ का वह अन्दाज़ होता है कि अगर ये कश्ती तैरती है तो हम तैरेंगें' डूबती है, तो हम भी साथ ही डूबेंगे। और ये एक रवइया है कि हमें तो हर हाल में अपनी हिफ़ाज़त करना है' लिहाज़ा कश्तियां जलानी नहीं हैं। हो सकता है कि उन का पलरा भारी हो जाऐ और ये भी हो सकता है कि इन को कामयाबी हासिल हो जाऐ' लेहाज़ा दोनों से बना कर रखो।

ये तो हुआ उस दो रूखेपन का वह एक ज़ाहिरी सानक़्शा कि जिस की मुनासिबत है उस लफ़्ज़ "नफ़क़" और "नाफिक़ा" से। लेकिन ज़रा ग़ोर किया जाऐ तो मालूम होगा कि उस में जो हासिल जज़्बा कारफरमा है वह जान व माल के बचाओ का है। हालाँकि होना तो ये चाहिए' बक़ौल अल्लामा इक़बाल कि

तू बचा बचा के न रख इसे' तिरा आइना है कि वह आइना
कि शिकस्ता हो तो अज़ीज़ तर है निगाहें आइना साज़ में!

ईमान का तक़ाज़ा तो ये है कि अपना सब कुछ लगा दो और खपा दो। अगर अल्लाह पर ईमान लाए हो' उस के रसूल सल्ल0 पर ईमान के दावे दार हो तो अल्लाह के दीन के ग़ल्बे और उस के रसूल सल्ल0 के मिशन की तकमील के लिए अपनी क़ूवतों और तवानाइयों को सर्फ कर देना ईमान का लाज़िमी तक़ाज़ा है' इस लिए कि ईमान तो बंदे और रब के दरमियान एक क़ौल व क़रार का नाम है। सूरह तौबा में उस को इस तरह फ़रमाया गयाः ''बे शक अल्लाह ने अहेल ईमान से उनकी जानें और उन के माल जन्नत के बदलें में खरीद लिए हैं।''

ये खरीद व फरोख्त हो चुका है। जान व माल इसी दुनिया में अल्लाह और उस के दीन के लिए लगा दो और खपा दो' उस के बदले आखिरत में अल्लाह तुम्हें जन्नत अता फरमायेगा। तो जान लो कि अब ये जान और माल तुम्हारे पास अल्लाह की अमानत हैं' ग़ल्बा व अक़ामत दीन की जिद्दो जहद में जब जान और माल की क़ुर्बानी की ज़रूरत पेश आए तो उन्हें अल्लाह की राह में निछावर कर दो। ये है ईमान का तक़ाज़ा। इसी लिए सूरह हुजरात में ईमाने हक़ीक़ी के बयान में लफ्ज़ "सदक़" को नुमायां किया गया हैः

''हक़ीक़ी मोमिन तो बस वही हैं जो ईमान लाए अल्लाह और उस के रसूल सल्ल0 पर और फिर शक में न पड़े' और वह जिहाद करें अपने मालों के साथ और अपनी जानों के साथ अल्लाह की राह में' यही लोग (अपने दावे ईमान में) सच्चे हैं''।

और यही वजह है कि सूरह अहज़ाब में उस सदक़ पर मबनी तर्ज़े अमल की तरफ तवज्जो साफ अल्फाज़ में दिलाई गई हैः '' वह जवाँ मर्द कि जिन्होंने जो अहेद अपने रब से किया था उसे पूरा कर दिखाया''। उस अहेद में कोताही 'उस के तक़ाज़ों को अदा करने से बचाना', उस से कतराना' उस से पीछे हटना निफाक़ का एक सबब है। इस के लिए एक बड़ी वाज़ेह और बाअसर मिसाल सूरह तौबा में आई है। फ़रमायाः

और उन में से कुछ लोग वह भी हैं जिन्होनें अल्लाह से एक अहेद किया था कि अगर वह हमें अपने फ़ज़ल में से कुछ अता फरमायेगा (यानी रिज़्क में कुशादगी फरमायेगा और हमें अपने अता फरमायेगा) तो हम सदक़ा करेंगे (उस के दीन की राह में ज़्यादा से ज़्यादा खर्च करेंगें) और हम सालेहीन में से हो जाऐंगे ''।

''लेकिन जब अल्लाह ने अपने फज़्ल में से उन्हें अता किया (उन्हें मालदार कर दिया) तो वह अब उस के साथ कन्जूसी कर रहे हैं (माल को सेंत सेंत कर

रख रहें हैं) और अपने उस अहेद से मुँह मोड़ रहें हैं और पीछे हट रहे हैं।''

इस से अगली आयत में वह अल्फ़ाज़ आ रहे हैं जिन के लिए मैं ने उस आयत का हवाला दिया' और जो निफ़ाक़ के अस्ल सबब को वाज़ेह कर रहे हैं।

'' तो अल्लाह तआ़ला ने (उन के इस तर्ज़े अमल को जुर्म में सज़ा के तौर पर) उन के दिलों में निफ़ाक़ पैदा कर दिया, उस दिन तक जब वह उस से मुलाक़ात करेंगे' उस वजह से कि उन्होंने अल्लाह से जो वादा किया था इस के ख़िलाफ वर्ज़ी की और इस वजह से कि वह झूट बोलते थे''।

निफाक़ का असल सबब

क़ुरआन मजीद में सूरह तौबा अैर सूरह अहज़ाब में मुनाफ़क़त और मुनाफिक़ीन के बारे में बड़ी लम्बी बहसे आयी हैं' लेकिन अकसर व बेशतर क़ुरआन का पढ़ने वाला उन पर से ये समझ कर गुज़र जाता है कि ये तो सिर्फ़ वह लोग थे जो महज़ धोखा देने के लिए अहले ईमान में दाखिल हुए थे। हालाकि बात सिर्फ यही नहीं है। इस में कोई शक नहीं कि वह भी एक तरह का निफाक़ था' लेकिन दर हक़ीक़त दौरे नबवी सल्ल0 में जो निफ़ाक़ पैदा हुआ उस का असल सबब –जिहाद से जी चुराना था था' यानी जान व माल के खपाने से कन्नी कतराना। ईमान महबूब है लेकिन कुफ्र से भी फायदा जुदा हुआ है' आख़िरत भी चाहते है' लेकिन दुनिया भी हाँथ से देने को तैयार नहीं। तो ये दो कश्तियों की सवारी दर हक़ीक़त निफाक़ की बुनियाद है। अगर बात वह है कि ''हर चे बादाबाद मा कश्ती दरआब अंदाअख़्तेम'' तो ये है सदक़ा' है यह है सच्चा ईमान। ऐसे ही लोगों के बारे में ये अलफाज़ हमनें पढ़ें हैं कि : (उलाइका कुमुस्सादेकून) यही सच्चे लोग है इस के विपरीत अपने उस अहेद में झूठा होना', उस में पीछे क़दम हटाना ही और असल झूठ और निफाक़ है।

माने के पस मंज़र में भी देखा जाए तो निफाक़ की अस्ल जड़ और बुनियाद दर हक़ीक़त जिहाद फी सबीलिल्लाह से क़नी कतराना है।

मुनाफिक़ की अलामत

लफ्ज़ "क़िज़्ब" के हवाले से निफाक़ के ज़िम्न में ये बात भी नोट कर लीजिए कि नबी अकरम सल्ल0 ने मुनाफिक़ की जो अलामतें बयान फरमाई हैं उन में किज़्ब को सरे फेहरसत रखा है। आप सल्ल0 ने फरमायाः

''मुनाफिक़ की तीन निशानियाँ हैंः (1) जब बात करे तो झूठ बोले। (2)जब वादा करे ख़िलाफ वर्ज़ी करे और (3) जब उसके पास काई चीज़ बतौर अमानत रखवाई जाए तो ख़ियानत करे।''

यहाँ चूँकि मामला उस तरह के निफ़ाक़ का नहीं है जो ज़ेहनों में बैठा हुआ है कि मुनाफिक़ तो उसे कहते हैं जिस ने मुसलमानों और इस्लाम को नुक़्सान पहुँचाने के लिए साज़िश के तौर पर इस्लाम का लिबादह ओढ़ा हो', लेहाज़ा उस हदीस की तश्रीह में आमतौर से ओल्माऐ इकराम निफाक़ की दो क़िस्में बयान करते हैं कि एक है "निफाक़ एतेक़ादी" और दूसरा "निफाक़ अमली"। उन की वज़ाहत के मुताबिक़ उस हदीस में निफाक़े अमली का तज़्किरा है' निफाक़े एतेक़ादी का नहीं। बहरे हाल उस बहस से क़तए नज़र आप सल्ल0 का फरमान ये है कि ये तीन सिफतें वह हैं कि जो अगर किसी की तबीयत में जमा हो जाऐं तो वह पक्का मुनाफ़िक़ है। हाँ अगर कभी किसी वक़्त झूठ का इर्तिक़ाब हो जाए या कभी किसी वक़्त वादा ख़िलाफी हो जाए तो ये चीज़ निफाक़ के ज़ेल में नहीं आए गी।

ये मज़मून एक और मुत्तफिक अलैह हदीस में इस से भी ज़्यादा ताक़ीदी शक्ल में आया है। हुज़ूर सल्ल0 फरमाते हैंः कि चार आदतें ऐसी हैं कि जिस में वह चारों मौजूद हों तो वह शख़्स मुनाफिक़ है' पक्का और कट्टर मुनाफिक। एक रिवायत में ये बढ़े हुये अल्फाज़ भी आऐ है कि आप सल्ल0 ने

फरमाया : चाहे वह वह शख्स रोज़ा रखता हो चाहे वह नमाज़ पढ़ता हो और चाहे वह उसे खुद भी ये गुमान हो और वह ये खयाल करता हो कि मैं मुस्लमान हूँ। लेकिन अगर ये चारों सिफतें उसमें मौजूद है तो वह पक्का मुनाफिक़ है। उस हदीस में इन तीन बातो के अलावा जिन का ज़िक्र पिछले हदीस में था', चौथी चीज़ आप सल्ल0 ने ये गिनवाई कि जब कहीं कोई झगड़ा हो तो वह आप से बाहर हो जाऐ' न ज़बान पर कन्ट्रोल रहे ना जज़्बात पर। ये चौथी सिफ़त या चौथी अलामत है मुनाफिक़ की। हजूर सल्ल0 ने उस हदीस में मज़ीद वज़ाहत फ़रमाइ कि जिस में ये चारों खस्लतें जमा हैं वह तो कट्टर मुनाफिक़ है और जिस में उन में से कोई एक सिफत पायी जाती है उस में उसी मुनासिबत से निफाक़ मौजूद है। ये है निफाक़ की हक़ीक़त क़ुरआन व हदीस के मुताबिक।

एक ग़लत फ़हमी का निवारण

अब एक बात और जान लीजिऐ। एक ख्याल ये भी आम लोगों के ज़हेन में बेठ गया है और बाज़ रिवायत से गलत तरीक़े से नतीजा निकाल लिया गया है कि निफाक़ तो बस दौरे नबी सल्ल0 ही में था' उस के बाद अब निफाक़ कही मौजूद नही है। हालांकि ये एक ऐसा नफ़सीयाती मर्ज़ है कि कोई इन्सानी समाज कभी इस से खाली नही रहा। हर इंसानी जद्दोजहेद में तीन तरह के तबके हमेशा मौजूद रहे हैं। एक वह कि जो किसी नई दावत को या नज़रिये को खुल्लम खुल्ला क़ूबूल करते है' बिला ख़ौफ व ख़तर। दूसरे वह जो खुल्लम खुल्ला मुखालफ़त करते हैं और उस दावत या जद्दो व जहेद का रास्ता रोकने के लिए मैदान में आ जाते हैं। एक तीसरा तबक़ा वह होता है कि वह किसी ओर केन्द्रित नही होता' बल्कि इधर वालों से भी बना कर रखना चाहता है और उधर भी अपने ताल्लुकात बर क़रार रखने की कोशिश करता है। उसे हर वक़्त अपनी हिफ़ाज़त मतलूब होती है कि अगर ऊँट इस करवट

बैठ जाए तब भी हमारे लिए बचाव का कोई रास्ता रह जाए और अगर कहीं उस करवट बैठे तब भी हमारे लिए मुकम्मल तबाही न हो!––– इस कैफियत को क़ुरआन ''तरब्बुस'' का नाम देता है और यही दर हक़ीक़त निफाक़ की बुनियाद है। सूरह हदीद में जहाँ निफाक़ की अस्ल और उसके असबाब का बयान है', वहाँ ये अलफाज़ आये हैं। उसी तरह सूरह तौबा की आयत 24 में भी' जिस का हवाला इस से पहले दिया जा चुका हैं'। ये लफ्ज़ हमारे मुतालेआ में आ चुका है' कि ऐ नबी! उन मुसलमानों से कहे दीजिए कि अगर तुम्हें अपने बाप और अपने भाई और अपने बेटे और अपनी बीवियाँ और अपने रिश्तेदार और अपने वह माल जो तुम ने जमा किए हैं और अपने कारोबार जो तुमने बड़ी मेहनत से जमाए हैं और जिन के मांद पड़ने का तुम्हें खतरा लगा रहता है और अपनी जाएदादें जो तुम्हें बहुत महबूब हैं' अगर ये तमाम चीज़ें महबूब तर हैं अल्लाह से और उस के रसूल से और उस की राह में जिहाद से तो जाओ हालते "तरब्बुस" में रहो' इन्तिज़ार करो! – यहाँ इस तरीके बयान में ग़ैज़ व ग़ज़ब नुमांयां है और अल्फाज़ ये हैं: "जाओ इन्तिज़ार करो' यहाँ तक कि अल्लाह अपना फ़ैसला सुना दे और अल्लाह ऐसे फ़ासिकों को हिदायत नही देता।"

निफाक का अन्देशा किसे लाहक होता है ?

निफ़ाक़ के बारे में एक और बात जो लायक़े तवज्जे है, और नबी अकरम सल्ल0 की एक बड़ी ही पुर हिकमत हदीस भी इस सिलसिले में मिलती है कि मर्ज़ के निफाक़ हमले का असल खौफ़ मोमिन ही को होता है' मुनाफ़िक़ उस से अंदेशा महसूस नहीं करता', इस लिए कि वह तो उस बीमारी के चंगुल में जकड़ा जा चुका है। हदीस के अलफाज़ ये हैं :

"कि उस मर्ज़े निफाक़ से सिर्फ मोमिन ही अन्देशा महसूस करता है और उस से खुद को महफूज़ व मामून सिर्फ मुनाफिक ही समझता है।"

ज़ाहिर बात है कि डरेगा वही जिस की गठरी में माल होगा। चुनांचे जिस के पास ईमान की कुछ पूँजी मौजूद होगी वही उस के बर्बाद हो जाने का अन्देशा महसूस करेगा और जिस की पूँजी लुट चुकी हो उसे अब काहे का खौफ! ''रहा खटका न चोरी का दुआ देता हूँ रहज़न को''

हदीसे मुबारका से ये बात भी मालूम होती है कि गुनाह और ग़लती अगर्चे मोमिन से भी सादिर हो जाती है, लेकिन मोमिन के ऐहसास की शिद्दत का आलम ये होता है कि अगर उस से कोई गुनाह सादिर हो जाए तो वह यूँ महसूस करता हे कि जैसे वह एक पहाड़ तले दब गया हो, पहाड़ का सा बोझ उस के शरीर पर आगया हो। उस के विपरीत मुनाफ़िक से जब कोई इस तरह का मामला सादिर होता है तो एक हल्का सा एहसासे गलती तो उसे भी होता है लेकिन बस इतना कि जैसे किसी की नाक पर एक मक्खी बैठी थी और उसने उसे उड़ा दिया। इस शिद्दते एहसास की आखिरी दर्जे में कैफियत का मुशाहदा अगर करना हो तो हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि0 का मामला ज़हेन में लाइये। उन के बारे में नबी करीम सल्ल0 ये गवाही देते हैं कि जिस रास्ते से उमर का गुज़र होता है उस रास्ते से शैतान कनी कतरा जाता है। हक़ व बातिल में फर्क़ कर देने वाले उस उमर फारूक़ रज़ि0 के शिद्दते एहसास का आलम ये है कि एक मरतबा हज़रत हुज़ैफा रज़ि0 से' जिन्हें हुज़ूर सल्ल0 ने बुतौरे राज़ कुछ मुनाफिक़ीन के नाम बता दिये थे और जो नबी सल्ल0 के राज़दां वी हैसियत से मशहुर थे' हज़रत उमर रज़ि0 अल्लाह की क़सम देकर पूछते हैं कि ऐ हुजैफ़ा रज़ि0! मैं अल्लाह की क़सम देकर तुम से ये सवाल करता हुँ कि कहीं मेरा नाम तो उन मुनाफिक़ो में शामिल नहीं था! ये था एहसास की शिद्दत! इसी तरह का नक्शा एक अन्सारी सहाबी हज़रत हनज़ला रज़ि0 के वाक़िये में सामने आता है। वह एक बार एक अजीब कैफियत में घर से निकले। ज़बान से ये अलफ़ाज़ निकल रहे थे। कि हनज़ला

तो मुनाफिक़ हो गया' हनज़ला तो मुनाफिक़ हो गया। हज़रत अबूबक्र सिद्दीक रज़ि0 से रास्ते में मुलाक़ात हुई। उन्होंने सवाल किया कि मामला किया है? फ़रमाते हैं कि मैं तो मुनाफ़िक़ हो गया हुँ और वह इस लिए कि जब मैं हुज़ूर सल्ल0 की महफिल में होता हूँ ' आप सल्ल0 की मजलिस में होता हूँ तो ईमान व यक़ीन के एतेबार से मेरे दिल की कैफियत कुछ और होती है और जब अपने घर बार में जाकर दुनियावी कामों में मसरूफ हो जाता हुँ तो वह कैफियत बरक़रार नहीं रहती', यही तो निफाक़ है!—— हज़रत अबूबक्र सिद्दीक रज़ि0 अगर चाहते तो ख़ुद समझा सकते थे और उन की उलझन को दूर सकते थे' लेकिन आप रज़ि0 ने फ़रमाया कि हनज़ला ये कैफियत तो मेरी भी है। तो आओ चलो' हुज़ूर सल्ल0 की ख़िदमत में हाज़िर हो कर दरयाफ्त करें कि ये मामला किया है! हुज़ूर सल्ल0 की ख़िदमत में हाज़िरी हुई' मामला पेश किया गया। आप सल्ल0 ने फ़रमायाः ऐ हनज़ला! उस ज़ात कि क़सम जिस के क़ब्ज़े क़ुदरत में मेरी जान है' जो कैफियत मेरी सोहबत में और मेरी मजलिस में तुम्हें हासिल होती है अगर वह कैफियत हमेशा रहे और तुम हर वक़्त अल्लाह के ज़िक्र में मशगूल रहो तो फरिशते तुम से तुम्हारे रास्तों में और तुम्हारे बिस्तरों पर मुसाफ़ा करने लगेंगे! लेकिन ऐ हनज़ला! ये तो वह दौलत है जो कभी कभार हाँथ आती है। यानी कैफियात का ये फर्क़ बिल्कुल फितरी है' ये निफाक़ नहीं है।

बहेरहाल निफाक़ से जिस दर्जे आज मुसलमान अपने आप को महफ़ूज़ ओर मुक्त समझते है' सहाबा इकराम रिज़वानुल्लाह अलैहिम अजमईन का मामला ऐसा नहीं था। हमारा हाल ये है कि कुरआन को पढ़ते हुए जब मुनाफिक़ो का ज़िक्रे आता है' जब हम उन आयत को पढ़ते हैं जिन में मुनाफिक़ो पर सख़्त अन्दाज़ में लानतान की गई है तो हम ये समझते हैं कि उन आयतों और उन मज़ामीन का हम से कोई तआल्लुक़ नही है' उन आयत

में हम से कोई बहस नही' ये कोई और ही मख्लूक़ है जिस के बारे में ये सारी बाते हो रही हैं। गोया के कुरआन मजीद के उन मुक़ामात और उन आयतें से हम बिल्कुल महरूम हो जाते है।

निफाक़ की हिलाकत खेज़ी

अब ज़रा एक नज़र उस मर्ज़े निफ़ाक़ की भयानकता और उसकी हिलाक़त खेज़ी पर भी डालये! उसका एक नक्शा तो इन्शा– अल्लाह "सूरतुल मुनाफ़िक़ीन" में हमारे सामने आएगा' ताकि इस ताल्लुक़ से "सूरतुन्निसा" की ये आयत भी बहुत क़ाबिले तवज्जे बल्कि लरज़ा देने वाली है: "यक़ीनन मुनाफिक़ीन आग के सब से निचले तबक़े में होंगे"। मालूम हुआ कि अल्लाह तआला को कुफ़्र के मुकाबले में निफाक़ ज़्यादा ग़ुस्सा दिलाने वाला और ना पसंद है। काफिर का मामला ये है कि वह खुल्लम खुल्ला सामने आकर मुक़ाबला करता है' जो कुछ उस के अन्दर होता है उसी का बाहर एलान करता है। काफ़िरों में वह भी है जो अपने झूठे दीन या अपने मुशिकाना अकीदे के लिए गरदने कटवा कर अपने किरदार की पुख़्तागी का सुबूत दे जाता है। अबूजहेल उसी तरह का एक किरदार था जिस ने अपने बातिल ख़ुदाओं और दीने बातिल के लिए अपनी गरदन कटवादी। उसके मुक़ाबले में मुनाफ़िक़ो का किरदार बड़ा घिनावना किरदार है और अल्लाह की निगाह में ईन्तिहाई ना पसन्द है। यही वजह है कि सख़्त तरीन सज़ा अल्लाह तआला ने मुनाफ़िकों ही के लिए तय्यार की है।

उसी का एक मुज़ाहिरा ये भी है कि मुनाफ़िक़ो को रसूलूल्लाह (सल्ल0) की शिफाअत और इस्तग़फ़ार से महरूम कर दिया गया। "सूरतुल मुनाफ़िक़ून" में ये बात बड़े दो टूक अन्दाज़ में आई है कि मुनाफ़िकों के हक़ में नबी करीम (सल्ल0) का ईस्तग़फार भी अल्लाह के यहाँ मक़बूल नहीं है। यही मज़मून सूरह तौबा में अपनी इन्तिहाइ सूरत में आया है। फरमाया : "(कि ये

नबी! अल्लाह तआला मुनाफ़िक़ीन से इस दर्जे नाराज़ है कि) अगर आप सत्तर मर्तबा भी उन के लिए ईस्तग़फार करेंगे तब भी अल्लाह तआला उन को मआफ़ नही करेगा"। ये है दर हक़ीक़त निफाक़ की भयानकता और अन्जाम के एतेबार से हलाकत ख़ेज़ी!––लिहाज़ा इस राह में आना है तो दिल व दिमाग़ के यक्सू फैसले और बिला किसी ख़ौफ के आना होगा। "जिस को हो दीन व दिल अज़ीज़ उस की गली में जाऐ क्यो"? तहफ़्फ़ुज़ के साथ मत आओ' जान व माल को किसी तौर से सलामत रखने का फैसला करके ना आओ' बल्कि तय करके आओ कि जो तक़ाज़ा होगा हाज़िर होगा', जो मुतालबा किया जायेगा पूरा करेंगे। तभी निफाक़ से महफूज़ रह सकोगे।

<u>निफाक़ से बचाओ का ज़रीया ––– ज़िक्रे इलाही</u>

अब ज़रा हमें इस पहलू से भी ग़ौर करना है कि मर्ज़े निफाक़ से बचाओ का ज़रिया और तरीक़ा कौन सा है! –– जाहिर बात है कि निफाक़ ज़िद है ईमान की। ये बात ज़हेन में रहे के इमान की जिद (antonyms) दो है' एक क़नूनी या ज़ाहिरी एतेबार से और दूसरी बातिनी एतेबार से। क़ानूनी एतेबार से मोमिन के मुक़ाबले में "काफिर" का लफ्ज़ आता है। बल्कि यहाँ मोमिन के बजाऐ मुसलमान का लफ्ज़ ज़्यादा मुनासिब है। चुनांचे क़ानूनी एतेबार से तो दो ही दर्जे मोमिन के हैः काफिर या मुस्लमान। तो हम बातिनी एतेबार से और दिली कैफियत के लेहाज़ से ईमान की ज़िद है निफाक़! – इस पहलू से मोमिन के मुक़ाबले में मुनाफिक़ का लफ्ज़ आता है' गौया हक़ीक़त के एतेबार से ईमान की ज़िद निफाक़ है और क़ानूनी एतेबार से कुफ्र! लिहाज़ा अगर कोई शख़्स अपने आप को निफाक़ से बचाना चाहता है और नही चाहता कि कभी उस मर्ज़ की चोट उसे लगे तो एक ही सूरत है और वह ये कि अपने ईमान की हिफाज़त करे और उसे मज़बूत रखने की फ़िक्र करें। और ईमान की पुख़्तगी, उसकी तक़िवयत और उसको सरसब्ज़ो शादाब रखने का

हक़ीक़ी और बेहतरीन ज़रीया ज़िक्रे इलाही के सिवा और कोई नहीं! तिलावते क़ुरआन हकीम और नमाज़ ज़िक्र की आला तरीन सूरतें हैं, या फिर दवामें ज़िक्र की वह सूरत जिसका तज़्किरा पिछले सबक़ यानी सूरह "जुम्आ" में था। अल्लाह का ज़िक्र कसरत के साथ करते रहा करो,उसकी याद को अपने दिल में हरदम ताज़ा रखो, उससे लौ लगाए रखो, आख़िरत को याद रखो और जान लो कि तुम्हारी अस्ल मंज़िल यह दुनिया नहीं, आख़िरत है। हार और जीत के फैसले का वह दिन है..... और अगर कहीं मर्ज़ें निफ़ाक़ की कोई छूत तुम्हें लग गई हो, इन्फेक्शन हो गया हो, इस मर्ज़ ने दिल में कुछ जड़ें जमा ली हों तो अब उसका इलाज करना होगा और वह इलाज है इन्फ़ाक़! यानी अल्लाह की राह में ख़र्च करना।

<u>निफ़ाक़ का इलाज : इन्फ़ाक़</u>

दिलचस्प बात यह है ''निफाक़'' और इन्फ़ाक़ दोनों का तीन हर्फी माद्दा एक ही है यानी ''नून फे क़ाफ''। उस से ''नफक़'' और ''नाफिक़ा'' के अल्फाज़ आते हैं जिस से मुनाफिक़त का लफ्ज़ निकला है और इसी माद्दे से ''नफक़ा, यनफक़ू'' के अल्फाज़ निकले हैं जिन से बाबे अफ़आल में ''इन्फ़ाक़'' बनता है' यानी खर्च कर देना और खपा देना। यही ''इन्फ़ाक़'' दरअस्ल मुनाफिक़त का सही इलाज है। अल्लाह की राह में जान व माल खर्च करो' लगाओ और खपाओ! दिल की दुनिया को इस माल की मोहब्बत और उस की नजासत से पाक व साफ करो!––दुनिया के तमाम माल व असबाब महज़ बरतन और इस्तिमाल करने की चीज़ें हैं लेकिन देखना उस की मोहब्बत दिल में बैठने न पाये' ये माल व दौलते दुनिया किसी दर्जे में भी तुम्हारा मतलूब व मक़्सूद ना बन जाए!––उस का ज़रिया यही है कि जो माल व दौलत अल्लाह ने तुम्हें अता किया है उसे क्या किया। उसे ज़्यादा से ज़्यादा अल्लाह की राह में खर्च करो। माल की मोहब्बत को दिल से खुरचने और नफ़्स के

तज़किये के लिए ये अमल बहुत ज़रूरी है। "सूरतुल मोमिनून" के दर्स में ये बात आई थी' वहाँ अहले ईमान की एक अहेम खूबी बयान हुई थी। वह लोग कि जो ज़क़ात पर कार बन्द रहते है' यानी नफ़्स के तज़किये के लिए अपने माल लगातार अल्लाह की राह में खर्च करते हैं––ये मज़मून "सूरतुल मुनाफ़िक़ून" के आखिरी हिस्से में तफ़्सील से आएगा। उस से पहले सूरतुल तग़ाबुन के आखिर में भी हम ने देखा कि उस जानिब इशारा मौजूद था। कि खर्च करो' उस में तुम्हारी भलाई है और जो कोई जी के लालच से बचालिया गया वही फलाह पायगा ––फिर भी ये मज़मून अपने नुक़्ताये उरूज को पहुंचा हुआ नज़र आएगा। "सूरतुल हदीद" में जो हमारे इस मुन्तख्ब निसाब का आखिरी मुक़ाम है। "इनफाक़ फ़ी सबीलिल्लाह" का मज़मून इन्शा अल्लाह वहाँ पूरी तफ़्सील के साथ आएगा। बहेर हाल निफाक़ के बारे में ये वह चन्द बुनियादी बाते हैं जो जान लेनी ज़रूरी हैं। उन की रोशनी में इन्शाह अल्लाह जब हम "सूरतुल मुनाफ़िक़ून" का अध्ययन करेंगे' हर हर हुर्फ खुद बोलता महसूस होगा और आयत के दरम्यान रब्त व तआल्लुक अज़खुद नुमायां होता चला जाएगा।

ये बात इससे पहले भी अर्ज़ की जा चुकी है कि क़ुरआन मजीद की सूरतें आमतौर से जोड़ों की शक्लें में होती हैं। एक ही मज़मून का एक रूख एक सूरत में और उस का दुसरा रूख उस जोड़े की दूसरी सूरत में ज़ेरेबहस आता है। यहाँ नोट कीजिये कि "सूरतुल मुनाफ़िक़ून" के फौरन बाद "सूरतुल तग़ाबुन है"। सूरतुल तग़ाबुन का विषय है ईमान' जबकि "सूरतुल मुनाफिकून" हक़ीक़ते निफाक़ से बहेस करता है। निफाक़ ज़िद है ईमान की। गोया एक ही तस्वीर के मुस्बत रूख का बयान "सूरतुल तग़ाबुन" में है और उस के मनफी रूख का ज़िर्क "सूरतुल मुनाफ़िक़ून" में है और इस तरह मज़मून मुकम्मल होता है। ये "सूरतुल मुनाफिकून" है' जो अठ्ठाइसवें पारे में "सूरतुल

जुमा" के बाद और "सूरतुल तग़ाबुन" से पहले वारिद हुई है। दो रकूओं पर आधारित इस सूरत की कुल ग्यारह आयतें है। उस का एक साफ और बामुहावरा तर्जुमा यूँ होगा :

"ऐ नबी (सल्ल0)! जब ये मुनाफिक़ आप के पास आते हैं तो कहते हैं कि हम गवाह है इस पर कि आप अल्लाह के रसूल हैं। और अल्लाह को खूब मालूम है कि आप उस के रसूल हैं' लेकिन अल्लाह गवाही देता है कि ये मुनाफिक़ झूठे हैं। उन्होंने अपनी क़स्मों को ढाल बना लिया है' पस वह अल्लाह के रास्ते से रूक गये हैं' यक़ीनन बहुत बुरा है वह तर्ज़े अमल जो उन्होंने ने इख़्तियार किया। ये इस लिए कि वह ईमान लाए' फिर उन्होनें कुफ्र किया, तो उनके दिलों पर मुहर कर दी गई, तो अब वह समझ से खाली हो चुके हैं। और जब आप उन्हें देखते हैं तो उनके डील डौल और उनके तन व तोश से आप प्रभावित होते हैं, और अगर वह बात करते हैं तो आप उनकी बात तवज्जो से सुनते हैं। उनकी मिसाल उन सूखी लकड़ियों की सी है जिनको सहारे से खड़ा कर दिया गया हो। हर धमकी को वह अपने ही ऊपर समझते हैं। यही दुश्मन हैं, पस उनसे बचिए। अल्लाह तआला उन्हें हलाक करे, कहां से उलटे फिरे जा रहें हैं। और जब उनसे कहा जाता है कि आओ ताकि अल्लाह के रसूल सल्ल0 तुम्हारे लिए इस्तिग़फार करें तो वह अपने सरों को मटकाते हैं और आप देखते हैं उनको कि वह रूके रह जाते हैं घमण्ड और ग़ुरूर की वजह से। उनके हक़ में बिल्कुल बराबर है चाहे आप उनके लिए इस्तिग़फ़ार करें चाहे न करें, अल्लाह तआला हरगिज़ उनको मआफ़ फ़रमाने वाला नहीं। अल्लाह तआला ऐसे नाफ़रमानों को हिदायत नहीं देता। वही हैं जो यह कहते हैं कि मत ख़र्च करो उन पर जो अल्लाह के रसूल सल्ल0 के आस पास हैं यहां तक की यह भीड़ तितर–बितर हो जाए, हालांकि आसमानों और ज़मीन के खज़ाने अल्लाह ही की मिल्कीयत हैं लेकिन मुनाफ़िकीन को

उसकी समझ हासिल नहीं। कहते हैं अगर हम लौट गए मदीने की तरफ तो हम में से बाइज़्ज़त लोग कमज़ोरों का निकाल बाहर करेंगें, हालांकि इज़्ज़त तो अल्लाह के लिए, उसके रसूल सल्ल0 के लिए और अहले ईमान के लिए है, लेकिन मुनाफ़िक इसका इल्म नहीं रखते।

ऐ ईमान वालो! न ग़ाफ़िल कर पाऐं तुम्हें तुम्हारे माल और तुम्हारी औलाद अल्लाह की याद से। और जो कोई इसका इर्तिकाब करेगा तो वही हैं कि जो ख़सारे में रहने वाले हैं। और ख़र्च करो और ख़पा दो उसमें से कि जो हमने तुम्हे दिया है इस से पहले पहले कि तुम में से किसी की मौत आ खड़ी हो और फिर वह कहे ऐ मेरे रब क्यों न तू टाल दे मेरे इस निश्चित समय को थोड़े से वक़्त के लिए तो मै सदक़ा करूं और मैं नेकूकारों में से हो जाऊँ। और हरगिज़ हरगिज़, टालेगाा न अल्लाह किसी भी नफ़्स के लिए भी जब कि उसका निर्धारित समय यानी उसकी मौत आ पहुचे, और अल्लाह तआला बाख़बर है उस से कि जो तुम कर रहे हो।''

जैसा कि इससे पहले अर्ज़ किया जा चुका है, यह छोटी सी सूरह निफ़ाक़ के विषय पर इन्तेहाई जामेअ है। अब हम अल्लाह के नाम से उसकी आयाते मुबारिका का सिलसिलेवार अध्ययन करते हैं। जो बात निफ़ाक़ के बारे में शुरू में अर्ज़ की जा चुकी हैं, इन्शा अल्लाह इनके बाद इस सूरह मुबारिका के मतालिब व मफ़ाहीम बड़ी आसानी से वाज़ेह होते चले जाएंगें।

आगे बढ़ने से पहले यह बात ज़हेन में रखिए कि अगर्चें निफ़ाक़ का ज़िक्र बाज़ मक्की सुरतों में भी मौजूद है' चुनांचे हमारे उस ''मुन्तख़ब निसाब'' के अगले दर्स यानी "सूरह अनकबूत" में ये बात सामने आएगी' लेकिन निफ़ाक ने एक बाक़ाएदा इदारे की शक्ल मदनी दौर में इख्तियार की। और जैसा कि अर्ज़ किया जा चुका है कि ये एक बीमारी थी जिस ने बढ़कर धीरे धीरे ''निफ़ाक़'' की निश्चित शक्ल इख़्तियार की। चुंनाचे इस ज़िम्न में हमें ये

हिकमत नज़र आती है कि मदनी सूरतों में से अव्वलीन सूरतों में इस रोग की निशान देही तो की गई है और बीमारी का ज़िक्र तो मौजूद है 'मगर लफ्ज़ ''निफ़ाक़'' इस्तेमाल नहीं किया गया। यानी किसी को निश्चित रूप से मुनाफ़िक़ क़रार नहीं दिया गया। चुंनाचे सूरह "बक़र" में ये अल्फाज़ वारिद हुए हैं: ''उन के दिलों में एक बीमारी थी तो अल्लाह ने उन की बीमारी को बढ़ा दिया''——लेकिन पूरी सूरह बक़रः में कहीं लफ्ज़ 'निफ़ाक़''या ''मुनाफ़िक़त'' या ''मुनाफ़िक़'' मौजूद नहीं। ताहम जैसे जैसे मामला आगे बढ़ा' ये मर्ज़ पूरी तरह स्पष्ट होकर सामने आया। शुरू में हिकमते तरबियत का तक़ाज़ा भी ये था कि उन को बिल्कुल नंगा न किया जाए' अलामत बयान कर दी जाए' ताकि जिन के दिलों में अभी ये रोग इब्तिदाई दर्जे में हो' अगर वह सचेत हो जाएं और इसलाह पर आमादा हों तो उस में उन्हें कोई झिझक महसूस न हो। लेकिन बहेर हाल एक वक़्त आया कि फिर मुनाफिक की इस्तिलाह खुल कर इस्तेमाल हुई।

<u>सूरह मुनाफिकून का जमानाये नुजूल</u>

इस सूरह के नाज़िल होने के बारे में क़रीब क़रीब इत्तिफाक़ है कि ग़ज़वा बनी मुसतलक़ के दौरान या उस के फ़ौरन बाद नुज़ूल हुआ। अर्गचे उस ग़ज़वे का क़तई ज़माना निश्चित करना खासा मुश्किल है और इस बारे में कुछ इख़तिलाफे राए भी पाया जाता है' फिर भी इस में कोई शक नहीं है कि ये ग़ज़वा मदनी दौर के करीब और बीच में पेश आया और उस मौक़े पर बाज़ निश्चित अक़आत ऐसे सामने आए कि जिन के पसे मंज़र में जब ये आयतें नाज़िल हुई तो उन्होंने ''निफाक़'' के मौजू पर एक निहायत मुकम्मल मज़मून की हैसियत इख्तेयार करली।

<u>मुनाफिको के दावा में ईमान की हकीकत</u>

फ़रमाया कि जब वह मुनाफ़िक़ आप के पास आते हैं तो कहते हैं कि

हम गवाही देते हैं कि आप अल्लाह के रसूल हैं। ये टुकड़ा बहुत क़ाबिले तवज्जे है। यहाँ निफाक़ के बारे में एक बात ये भी ज़ेहन नशीन कर लीजिए कि वह निफ़ाक़ जिस का ज़हूरे दौर नबवी में मदीने में हुआ' उस का आग़ाज़ दर हक़ीक़त यहूद की जानिब से हुआ और मुसलमानों में से भी औस और ख़ज़रज के क़बीलों के वह लोग सब से पहले इस मर्ज़ की लपेट में आए जिन के यहूदियों के साथ दोस्ताना ताल्लुक़ात और समाजी ताल्लुक़ात थे। यहीं से निफाक़ का पौधा परवान चढ़ा और फल–फूला। यहूद के बारे में एक बात ये जान लेनी चाहिए कि उन्होंने जब नबी अकरम सल्ल0 की उभरती हुई ताक़त को देखा तो अर्गचे उन के ओलमा ख़ूब पहचान गए थे कि आप अल्लाह के रसूल हैं लेकिन नसली तअस्सुब के सबब ईमान लाने पर तैयार न हुए। नबी आख़िरूज़्ज़मां की पेशीनगोई उन के यहाँ मौजूद थी और वह इन्तेज़ार में थे कि उस नबी के ज़हूर का वक़्त अब क़रीब है। चुनांचे जब कभी ओस और ख़ज़रज के लोगों से उन का झगड़ा होता और उन की तादाद ज़्यादा होने की वजह से यहूदियों को दबना पड़ता तो वह ये धमकी दिया करते थे कि इस वक़्त तो हमें जिस तरह चाहो दबालो लेकिन याद रखो कि आने वाले नबी की आमद का वक़्त क़रीब है' जब हम उसके साथ होकर तुम से लड़ेंगे तो हम पर ग़ालिब न आ सकोगे। गोया आप हुज़ूर सल्ल0 को उन्होंने ने पहचान तो लिया था लेकिन उन्हें ये गुमान था कि आख़िरी नबी उन्हीं में से यानी बनी इसराईल से होगा। चुनांचे ये नसली और क़ौमी ताअस्सुब उन के पाँव की बेड़ी बन गया कि हम से ये फज़ीलत क्यों छीन ली गई और बनी इस्माईल में आख़िरी और कामिल नबूवत का ज़हूर कैसे होगा!! यही उन के क़ुबूले इस्लाम की राह में सबसे बड़ी रूकावट बन गया।

हमें अल्लाह तआ़ला ने जिस तरह मदीना मुनव्वरा में हुज़ूर सल्ल0 को इक़्तिदार और ग़ल्बा अता फरमाया उसके आगे वह बेबस से होकर रह गए।

उन के बाद लोगों ने ये मोक़िफ इख़्तेयार किया कि हमें भी मुसलमान तसलीम किया जाए' इस लिए कि जिन बातों की दावत मोहम्मद सल्ल0 दे रहे हैं उन में से दो बातें वह हैं जिन को हम पहले ही से मानते हैं। आप सल्ल0 तौहीद का दावत दे रहें हैं' हम तौहीद के पहले से अलमबरदार हैं' आप सल्ल0 आख़िरत की दावत दे रहें हैं' हम भी आख़िरत के मानने वाले हैं। फिर ये कि तीसरी बुनियादी शे नुबूअत व रिसालत है' उस में भी हमारे दरम्यान कोई बुनियादी इख़्तिलाफ नहीं है। नुबूअत व रिसालत के हम भी इसी तरह क़ायल हैं जैसे मोहम्मद सल्ल0। खुद मोहम्मद सल्ल0 ये फ़रमा रहे हैं कि मूसा अलै0 अल्लाह के रसूल थे' ईसा अलै0 अल्लाह के रसूल थे और यही नहीं बल्कि बनी इसराईल के तमाम अम्बिया जो उन के माबीन आए उन सब की सदाक़त के आप सल्ल0 मोतरफ हैं तो अब बाक़ी सारे मामलात में हमारे और उन के दरम्यान मुकम्मल समानता मौजूद है' सिवाये उस के कि हम उन की रिसालत के क़ायल नहीं। "सूरत उल बक़रा" के दूसरे रूकू के इब्तिदाई अल्फाज़ बड़े क़ाबिल तवज्जा हैं। वहाँ जो नक्शा खींचा गया वो यहूद और मुनाफ़िक़ों दोनों पर ढीक बैठता है। फ़रमाया '' कि लोगों में से कुछ वह भी हैं जो कहते हैं कि हम ईमान लाए अल्लाह पर और यौमे आख़िर' पर हालांकि वह ईमान नहीं रखते''। उसमें दरहक़ीक़त यहूद के उस मोकिफ की तर्जुमानी भी होगी कि कहते थे कि हम अल्लाह के मानने वाले और यौमे आख़िर पर इमान रखने वाले है। अब झगड़ा सिर्फ़ रह जाता है मुहम्मद रसूल (सल्ल0) कि नुबूवत व रिसालत का। तो चलें अगर इतनी सी बात रह भी जाऐ तो उस में हर्ज क्या है। मुस्लमानों को चाहिए कि वह हमारी ये हेसियत तस्लीम करें कि हम भी मुस्लमान हैं। यही मामला था कि यहूद के ज़ेरेअसर जब ओस और खजरज के कुछ लोगों तक ये बात पंहुची तो उन्होने भी कुछ इसी तरह का रवइया इख़्तियार किया कि अगर हम मुहम्मद रसूल (सल्ल0)

की मुकम्मल इताअत और पैर वी इख़्तियार न भी करें तो तब भी हमारे ईमान में कोई खलल पैदा नहीं होता! लेकिन फिर जब कोई ऐसा मौक़ा आता था कि उनकी कोताही पर गिरफ्त की जाती थी और उन्हें कोई सफ़ाई या कोई माज़रत पेश करनी पड़ती तो उन की तरफ़ से अपने ईमान के दावे और इज़हार के लिए जो सब से ज़्यादा पुरज़ोर बात कही जाती थी वह यही थी कि हम आप (सल्ल0) को अल्लाह का रसूल मानते हैं।

यहीं वजह है कि यहाँ उस सूरह मुबारका की पहली आयत में ईमानियात में से सिर्फ इमान बिर रिसालत का ज़िक्र है कि मुनाफिक़ लोग हुज़ूर की ख़िदमत में आकर क़स्में खा खाकर कहते थे कि हम तस्लीम करते हैं कि आप सल्ल0 के रसूल हैं। उस के बाद बड़े ही लुत्फ़ व प्यारे तंज़ के अन्दाज़ में फरमाया : कि अल्लाह से बढ़ कर किसको मालूम होगा कि आप (सल्ल0) के रसूल हैं' लेकिन फ़िल–हक़ीक़त ये मेनाफिक़ झूठ बयानी के मुरतकिब हो रहे हैं। गोया कि जो बात उन की ज़बान से निकल रही है वह अगर्चे लफ्ज़न गलत नहीं है' लेकिन उन का कौल उन की दिली कैफ़ियात की तर्जुमानी नहीं बल्कि सूढला रहा। ये लोग दिल से आप (सल्ल0) को अल्लाह का रसूल तस्लीम नहीं करते। लिहाज़ा फरमाया : "अल्लाह गवाही देता है कि ये मुनाफिक़ झूठे हैं।"

<u>निफाक़ के दरजात और उन की अलामत</u>

यहाँ लफ्ज़ "किज़्ब" खास तौर पर लायक़े तवज्जे है जैसा कि पहले अर्ज़ किया जा चुका है कि यह किज़्ब ही है दरहकीकत निफ़ाक़ की शुरूआत है। चुंनाचे सूरह "मुनाफ़िक़ून" की पहली ही आयत में उसकी निशानदेही हो गयी। शुरू में तो यह "किज़्ब" सादा से झूठे की सूरत में होता है। लेकिन आगे बढ़कर जब यह मर्ज़ दूसरे मर्हले में दाखिल होता है तो फिर यह झूठी क़स्मों की शक्ल इख़्तियार करता है। चुंनाचे दूसरी आयत में देखिए क़स्मों का ज़िक्र

आ गया। फ़रमाया–"उन्होनें अपनी क़समों को ढाल बना रखा है।" "यमीन" दाहिने हाथ को भी कहते हैं।और चूंकि कसम खाते हुए और क़ौल–ओ–क़रार के मौक़ा पर दाहिना हाथ उठाने की एक परम्परा पुराने ज़माने से चली आ रही है, लिहाज़ा क़सम को भी "यमीन" से ताबीर किया जाता है। यहाँ यह लफ़्ज़ उसी मायने में आया है। अगर आप उनसे पूछें, कोई पूछ ताछं करें या उनको कहीं भी किसी मामले में अपने मोकिफ की वज़ाहत करनी पड़े तो फौरन क़समों को अपनी ढाल की हैसियत से इस्तेमाल करतें हैं कि खुदा की क़सम है, अल्लाह गवाह है कि जो कुछ हम कह रहें हैं कि वह दुरूस्त है! अपनी क़स्मों को ढाल बनाने का नतीजा यह है कि (फ़सददू अनसबीलिल्लाह) सददा पसुद्दो अरबी ज़बान में लाज़िम और मुतअद्दी दोनों माअने देता है। यहाँ मफ़हूम यह होगा कि यह खुद भी रूक गए हैं अल्लाह के रास्ते से और दूसरों को भी रोकने का सबब बन गए हैं। ज़ाहिर बात यह है कि हर फ़र्द अपनी – अपनी हैसियत के ऐतबार से दूसरों के लिए नमूना बनता है। वह या तो ख़ैर की दावत देने और तरग़ीब का सबब बनेगा, या दूसरों के लिए शर का रास्ता खोलेगा और नमूनए शर बनेगा।"वाक़िया यह है कि बहुत ही बुरा तर्ज़े अमल है जो उन्होने इख़्तियार किया है।" यानी अंजामें कार के ऐतबार से यह बहुत ही बुरी रविश है। दुनिया में तो शायद वक़्ती तौर पर उन्हें यह महसूस होता है कि हमने अपने उस तर्ज़े अमल की बदौलत जान–ओ माल का तहफ्फुज़ कर लिया, लेकिन हकीकत यह कि अंजामे कार के ऐतबार से बहुत ही गलत तर्ज़े अमल है जो उन्होने इख्तियार किया।

<u>निफाक़ का अस्ल सबब</u>

यहाँ उस आयते मुबारका में अनसबीलिल्लाह के अल्फाज़ नोट कर लिए जाए। ये गोया कि निशांदही कर रहे हैं कि निफ़ाक़ का अस्ल सबब अल्लाह की राह में जिहाद से भागना है यानी "ऐराज़ अनलजिहाद फी

सबीलिल्लाह" है। मुनाफ़िकों का मामला ये था कि वह किसी न किसी दर्जे में नमाज़ें पढ़ने को तैयार थे' लेकिन जानो माल के साथ जिहाद से उनकी जान निकल जाती थी। अब्दुल्लाह बिन उबई का कौल रिवायतों में आता है कि हम ने नमाज़ें भी पढ़ी हैं और ज़कातें भी दी हैं' लेकिन अल्लाह की राह में जानो माल खपाने का जो एक तक़ाज़ा और मुतालबा हर दम हमारे सरों पर छाया रहता है कि निकलो अल्लाह की राह में' अल्लाह के दीन पर फिर एक कठिन मर्हला आ गया है' अपनी जानें और अपने माल पेश करो' हम पर बहुत शाक है। ये वह चीज़ थी जो उनके क़दम क़दम पर रोकती थी। यही वह सबब और बुनियाद है कि जिस पर दर हक़ीक़त निफाक़ की ये पूरी इमारत तामीर होती है।

<u>निफाक की असल हकीकत</u>

अब यहाँ निफाक़ की अस्ल हक़ीक़त कर ज़िक्र आ रहा है' जिस के बारे में उस से पहले अर्ज़ किया जा चुका है कि निफ़ाक़ की एक क़िस्म वह भी थी और यक़ीनन थी कि इंसान इस्लाम का लिबादा ही धोखे के तहत' फ़रेब देने के लिए ओढ़ता था और ईमान की कभी कोई हरारत उसे नसीब होती ही न थी———लेकिन हक़ीक़त के ऐतेबार से निफ़ाक़ की जो अस्ल नोइअत थी वह यहाँ साफ अल्फाज़ में वाज़ेह हो रही हैः ''ये इस लिए हुआ कि वह ईमान लाए' फिर उन्होंने कुफ्र का रवइया इख़्तियार की''। नोट कीजिए की ये कुफ्र कानूनी कुफ्र नहीं है । अगर कोई शख़्स ईमान लाने के बाद एलानिया काफ़िर हो जाए तो वह मुर्तद क़रार पाएगा, लेकिन मुनाफिक मुर्तद नहीं थे। वह हमेशा अहले ईमान की सफ़ों में, कानूनी इस्लाम के दायरे में रहे। तो मालूम हुआ कि यहाँ ये लफ्ज़ कुफ्रे हक़ीक़ी के मायनों में इस्तेमाल हुआ है। जिस तरह एक ईमान, क़ानूनी ईमान है और एक ईमान, हक़ीक़ी ईमान है, उसी तरह एक कुफ्र क़ानूनी है यानी अलानिया कुफ्र, और एक है कुफ्र हक़ीक़ी।

उस कुफ्र हक़ीक़ी को अपने ज़ेहन में निफाक़ के बराबर क़रार दे लीजिए। यानी कुफ्र हक़ीक़ी ही दरस्ल निफाक़ है।

सूरे मुनाफ़िकून में निफाक़ के विषय से मुताल्लिक़ सारे मज़ामीन बड़े ही इख़्तिसार के साथ समो दिए गए हैं, लेकिन इस आयते मुबारका की जो तशरीह सूरह नास में वारिद हुई है उससे इंसान बखूबी समझ सकता है कि ये पूरा process एक दम और यकबारगी नहीं हो जाता और इंसान ये फ़ेसले अचानक और एक ही मर्तबा नहीं कर लेता, बल्कि उस में बहुत से उतार–चढ़ाओ आते है, इंसान कभी आगे बड़े रहा है, कभी पीछे हट रहा है, फिर कभी आगे बड़ने की कोशिश की है, फिर हट गया है। इस तरह की कैफियत देर तक रहती है, ताकि फिर मर्ज़ निफ़ाक दिल में बैढ जाता है और अपनी जड़ें मज़बूती से जमा लिया है। चुनांचे सूरह निसा में जो लफ़्ज़ आऐ हैं वह बड़े फ़र्क़ अन्गोज़ हैः

''बे शक वह लोग जो ईमान लाऐ फिर उन्होने कुफ्र किया, फिर इमान लाऐ फिर कुफ्र किया, फिर वह कुफ्र में बढ़ते चले गऐ, अल्लाह तआला उन को बख्शने वाला नही है और ना ही उन्हें कामयाब करने वाला है। (ऐ नबी सल्ल0!) ऐसे मुनाफ़िक़ों को आप खुशखबरी सुना दीजिए कि उन के लिए बड़ा दर्द नाक अज़ाब है।''

ये है मर्ज़े निफाक़ के शिकार इंसान की अन्दरूनी केफियत का नक़्शा कि कुछ आगे बढ़ा, फिर पीछे हटा, फिर हालात बेहतर हुये और आसानी हुई तो सर्गरमी के साथ कुछ पेश क़दमी की, लेकिन फिर कही कोई मुश्किल मर्हले आगये तो पीछे हट गये। इस कैफियत की मिसाल इस से पहले सूरह बकरः के दूसरे रूकू के हवाले से बयान की जा चुकी है : कि ईमान के रास्ते में, ईमान के तक़ाज़ों को अदा करने में कुछ आगे बढ़ते है, क़दम उठते है, फिर हिम्मत जवाब दे देती है। जान व माल खपाने के तक़ाज़े बड़े कठोर और बड़े

कठिन नज़र आने लगते हैं तो इन्सान बैठ जाता है। फिर कमर कस्ता है, फिर बैठे रहता है। ये अमल जारी रहता है, ऐसा इंसान मुस्तकिल बैठ रहता है और उस से हिम्मत व कोशिश की तौफीक़ ही खत्म हो जाती है। यही वह महला है जिस के बारे में यहाँ फरमाया : "तो उन के दिलों पर मुहर लग चुकी, पस वह फ़हेम से आरी हो चुके हैं।"

उस के लिए क़ुरआन हकीम में "तबअ कुलूब" के अलावा "ख़त्में कुलूब" के लफ्ज़ भी इस्तेमाल हुये हैं। ये दोनों तरकीब मफ़हूम', मआने और नतीजे के इतेबार से एक ही हैं। सूरह–बक़रः के पहले रूकू में खुले खुले काफ़िरों के ज़िर्क के सिलसिले में लफ्ज़ आऐ हैं। जबकि यहाँ मुनाफिक़ों के सिलसिले में फरमाया गया : "पस उनके दिलों पर मुहर करदी गई है।" "चुनांचे वह फहेम से आरी हो चुकी हैं।" उसी को सूरह–बक़रा में के लफ्ज़ से ताबीर किया गया है। यानी ये अन्धे, बहरे और गूंगे हो चुके हैं, उनकी सुनने और देखने की सलाहियतें बज़ाहिर मौजूद हैं, लेकिन वह भी हक़ीक़त सुनने से महरूम हो चुके हैं, हक़ीक़त देखने से महरूम हो चुके है और अब उनके लौटने का कोई इम्कान नहीं।

ज़ेहन में रखें कि निफाक़ का ये सारा मामला दरअस्ल क़ल्ब की दुनिया से यानी इंसान के बातिन से सम्बंधित है। वरना ज़ाहिरी तौर पर मुनाफ़िक़ों का मुस्लमानों ही में शुमार होता था। चुनांचे मुनाफिकों के सरदार अब्दुल्लाह बिन उबई को भी आखिरी वक्त तक मुसलमान तस्लीम किया गया। यहाँ इस्लाम और ईमान के दरम्यान फ़र्क़ को, या यूं कह लीजिऐ कि "क़ानूनी ईमान" और "हक़ीक़ी ईमान" के बीच उस फ़र्क़ को जो इस से पहले मुखतलिफ़ मौकों पर इस मुन्तखिब निसाब के दर्स के दौरान ज़ेर बहस आ चुका है, एक मर्तबा फिर ज़ेहन में ताज़ा कर लीजिये। इस लिए कि ये बड़ी अहेम बहस है। दीन के निज़ाम को समझने का बहुत हद तक दार व मदार

उसी पर है।

मुख्तसर ये कि एक है "क़ानूनी ईमान" जिस के लिए मुतरादिफ़ लफ़्ज़ "इस्लाम" है और एक है "हक़ीक़ी ईमान" जो यक़ीने क़ल्बी से इबारत है। इस यक़ीने क़ल्बी वाले ईमान से अगर इंसान महरूम हो जाऐ तो ये एक तरह के निफाक़ की कैफियत है। फिर भी ये वाज़ेह रहेना चाहिए कि निफाक़ या मुनाफिक़त किसी क़ानूनी दर्जे का नाम नहीं है और न ही मुनाफिक की कोई अलैहदा क़ानूनी हेसियत होती है, बल्कि क़ानूनी इतिबार से तो मुस्लिम और काफिर बस यहाँ दो हेसियतें होती हैं। हाँ एक मुसलमान की अन्दरूनी केफियात मुख्तलिफ हो सकती हैं। वह मुस्बत (Positive) तौर पर मोमिन भी हो सकता है और मनफी (Negative) तौर पर मुनाफिक़ भी!

मुनाफिक़ों की इस्लाम दुश्मनी – आँख खोल देने वाला वाक़िया

सूरह–"मुनाफ़िक़ून" की शुरूआती तीन आयतों का मुतालआ किसी दर्जे में हम ने मुकम्मल कर लिया है। उस सूरह मुबारका के पहले रूकू की बाक़ी आयतों को समझने के लिए उस के तारीखी पसे मन्ज़र को पहले ज़हेन में ताज़ा कर लेना मुनासिब होगा। हक़ीक़ते निफाक़ पर उसूली गुफ्तुगू अगर्चे हो चुकी है, लेकिन ये कि अमलन ये निफाक़ का मर्ज़ इन्सान को कहाँ से कहाँ पुहचाता है, जिस को उस से क़ल्ब टी बी की थर्ड स्टेज से ताबीर किया गया था, यानी निफ़ाक़ का वह मर्तबा जहाँ पहुँचा कर अहले ईमान के लिए बुग्ज़ अदावत और उन से दुश्मनी मुनाफ़िक़ के दिल में घर कर जाती है, इसकी एक नुमांया मिसाल उस वाक़िया के हवाले से सामने आती है जो गज़वये बनी मुस्तलक़ के मौक़े पर पेश आया।

इस ग़ज़वे में सहाबा किराम रज़ि0 के साथ–साथ कुछ मुनाफ़िक़ीन भी लश्कर में शामिल थे। अब्दुल्ला बिन उबई भी अपने गिरोह के साथ मौजूद था। अल्लाह तआला ने मुसलमानों को फ़तेह अता फरमायी। वापसी पर एक

कुएं के क़रीब जहाँ लश्कर का पड़ाव था, दो मुसलमान का आपस में झगड़ा हो गया। एक हज़रत जहजाह रज़ि0 थे जो हज़रत उमर रज़ि0 के मुलाज़िम थे और उन के घोड़े वग़ैरह को संभालते थे, और दूसरा शख़्स अंसार का हलीफ़ था। मामूली सा झगड़ा हुआ। हज़रत जहजाह रजि0 ने कहीं जज़बात में आकर उस को एक लात रसीद कर दी। उस पर हंगामा हुआ, एक शोर मच गया और पुरानी जाहिलियत को अवाज़ दी गई। होते होते ये मामला महाजिरीन और अंसार के दरम्यान एक झगड़े की शक्ल इख़्तियार कर गया। हुज़ूर सल्ल0 को खराब हुई, आप सल्ल0 तशरीफ लाए समझाया बुझाया, मामला रफा दफा हो गया। लेकिन जैसा की आम तौर से होता है, उस के बाद बहस–मुबाहसा का सिलसिला शुरू हुआ। कुछ लोग मुनाफ़िक़ों के सरदार अब्दुल्लाह बिन उबई के पास गए कि ये क्या हो रहा है? उन्होंने ने परेशानी का इज़हार किया के महाजिरों के हौसले बढ़ते जा रहे हैं! अब्दुल्लाह बिन उबई को तो यूँ समझिये कि एक मौक़ा हाँथ आ गया। उसकी अन्दरूनी गन्दगी के इज़हार के लिए ये एक बड़ा मुनासिब मौक़ा था। उसने उन लोगों को बुरा भला कहा कि आज मुझ से क्या कहते हो, ये सब तुम लोगों का किया धरा है। ये लुटे पुटे महाजरीन मक्का से आए थे, उनके पास कोई ठिकाना न था, तुम ने उन को जगह दी, तुम ने उन्हें पनाह दी, तुम ने उन पर खर्च किया, उन्हें खिलाया पिलाया। अब उनकी हिम्मतें इतनी बढ़ गई हैं कि हम लोग यानी अहले मदीना उन के शरारतों से महफ़ूज़ नहीं हैं। उसने सहाबाएकराम रज़ि0 के ख़िलाफ़ बड़े गन्दे अल्फाज़ इस्तेमाल किए। अरबी ज़ुबान की एक कहावत का हवाला दिया। (यानी अपने कुत्ते को खिला पिलाकर मोटा करो, किसी रोज़ वह ख़ुद तुम्हें काटेगा) और कहा कि यही मामला हमारे साथ हो रहा है, और खुदा की क़सम! अगर तुम लोग अपने हाँथ उन से खींच लो और उन पर खर्च न करो तो ये सब चलते बनेंगे। ये ईमान और जिहाद का शोर

सिर्फ इस वजह से है कि उन लोगों को खाने पीने को मिलता है, आराम और सहूलतें हासिल हैं। ये सहूलतें अगर छीन जाऐं तो ये सारी भीड़ छट जाएगी। उनसे बहुत ज़ोर देकर कहा कि जब हम मदीना वापस पहुचेंगे तो बल्कि एक राय होकर तय करलें कि जो इज़्ज़त वाले हैं, जो मदीना के पुराने बाशिन्दे हैं (या नई इस्तिलाह में जो Sons of the soil हैं) वह उन कमज़ोर लोगों को निकाल बाहर करें। उन महाजिरों को जो बड़े कमज़ोर हैं, जिन की कोई हैसियत नहीं, अब हम मदीना से निकाल करके छोड़ेंगे।

ये बातें जहाँ हो रही थी वहाँ हज़रत ज़ैद बिन अरक़म रह0 भी मौजूद थे जिन का शुमार उस वक़्त नौजवान और कम उम्र सहाबा में होता था। उन्होंने जाकर ये बात नबी अकरम सल्ल0 अलैह तक पहुँचाई। मामला चूँकि अहम था लेहाज़ा हुज़ूर सल्ल0 ने उन से उस बारे में ख़ूब अच्छी तरह पूछगछ की कि कहीं उन से सुनने में कोई गलती तो नहीं हुई। लेकिन जब आप अल्ल0 को इतमिनान हो गया कि हज़रत अरक़म रज़ि0 जो बयान कर रहे हैं वह हक़ीक़त है तो आप सल्ल0 ने अब्दुल्लाह बिन उबई को बुलवाया और पूछ गछ की। वह साफ क़सम खा गया कि मैं ने ऐसी कोई बात ही नहीं कही, ये बिल्कुल झूठ और इल्ज़ाम है जो मुझ पर लगाया जा रहा है। अब हज़रत ज़ैद बिन अरकम रज़ि0 की पोज़िशन बड़ी खराब हो गई कि अब्दुल्लाह बिन उबई की बात को सही तस्लीम किया जाए तो वह रज़ि0 झूठे बनते थे। इतने बड़े सरदार और इतने मुतबर शख्स के मुक़ाबले में उस क़म उम्र और नौजवान सहाबी रज़ि0 की बात कौन सुने! तो इस तरह हज़रत ज़ैद रज़ि0 की पोज़िशन बड़ी ही ख़राब हुई। उस पर ये आयत नाज़िल हुई। उन में गोया कि अल्लाह तआला ने नेक दिल और मुख़लिस मुसलमान के क़ौल की तस्दीक़ कि जो झूठ उस पर चस्पा कर दिया गया था उसे उस से पाकी हासिल हो जाए और अस्ल हक़ीक़त पूरे तौर पर मुसलमानों के सामने आ जाए।

इस पसे मंज़र में इन आयात का मुतालआ कीजिए और उसे पूरे सिलसिलये कलाम को मद्दे नज़र रखिए तो अंदाज़ा होता है कि उस मर्ज़े निफ़ाक़ की हलाकत ख़ेज़ी क्या है और ये इंसान को किस अंजामे बद से दो चार करता है। चुनांचे ये मर्ज़ जिस का आग़ाज़ आमतौर से एक मामूली सी कोताही से होता है, यानी दीन के तक़ाज़ों के मुक़ाबलें में अपनी जान व माल की हिफाज़त का ख़्याल और ईसारे व कुरबानी से परहेज, लेकिन जब ये आगे बढ़ता है तो झूठे बहानों और झूठी क़स्मों से होता हुआ उस मंज़िल तक पहुँच जाता है कि अल्लाह के रसूल की अदावत व दुश्मनी और सच्चे मुसलमानों से बुग्ज़ और हसद दिल में घर कर जाती है। ये गोया कि उस मर्ज़ की वह आख़िरी स्टेज है कि जिस के बाद दिलों पर मोहर लग जाती है। ये point of no return है कि यहाँ ये वापसी का अब कोई इमकान नहीं।

<u>मुनाफिक़ीन का ज़ाहिर</u>

फ़रमाया कि ऐ नबी सल्ल0! "जब आप उन्हें देखते है तो उन की जिस्म आप सल्ल0 को बड़ा भला लगता है"––– ये बात सूरह तौबा में भी साफ साफ इन्हीं अल्फाज़ में आई है। ज़ाहिर बात है कि जो लोग दुनियादारी और दुनियापरसत हैं और जिन की सारी मेहनत और जददोजहदे का मक़सूद और मसरफ़ बस दुनिया की ज़िन्दगी है, उन के पास माल व दौलत भी बेशुमार होगी और समाज में उन्हें एक हैसियत व मुकाम भी हासिल होगा। वह जिस मजलिस में बैठे होगें मोतबर नज़र आएंगे। तो उस का एक नक़्शा यहाँ खींचा गया है कि एक नबी! जब आप (सल्ल0) उन्हें देखते हैं तो उन के क़दो क़ामत और उन के बदन और चेहरे से आप सल्ल0 प्रभावित हाते हैं "और जब वह कोई बात करते हैं तो आप उनकी तरफ मुतवज्जे होते और बड़े ग़ौर से उन की बात सुनते हैं––आप (सल्ल0) उन के उस दिखावटी जिस्मों पर ना जाइऐ, ये लोग अन्दर से बिल्कुल खोखले हैं।

इंसान की एक मआनवी शख़्सियत होती है। वह उस की कूव्वते इरादी, उस के अज़्म और उस की सीरत व किरदार की कूव्वत से इबारत होती है। कोई शख़्स चाहे देखने में दुबला–पतला और कमज़ोर हो, अबू बक्र सिद्दीक रज़ि0 की तरह कि जो दुबले पतले नहीं नर्म–दिल भी थे लेकिन अन्दर अगर एक अज़ीमत और एक फ़ैसलाकुन वलवला मौजूद होतो ये शख़्स उन लोगों में से होगा जो तारीख के धारे का रूख़ मोड दिया करते हैं। ये वह हैं कि जिन के ज़रिये से कौमों की तक़दीरे बदलती हैं। तो उस मानवी शख़्सियत के ऐतबार से उन मुनाफिक़ीन का हाल ये है कि बड़ी सटीक मिसाल है कि एक तो वह दरख़्त है कि जो ख़ुद अपने बल पर खड़ा है और एक वह लकड़ी है जो अपनी जगह चाहे कितनी ही मोटी और वज़नी क्यों ना हो लेकिन ज़मीन में चूँकि उसे ग़िज़ा नहीं मिल रही लिहाज़ा वह सूख चुकी है और अब वह अपने बल पर खड़ी नहीं हो सकती, उसे किसी सहारे की ज़रूरत है। कहीं उसे सहारा देकर खड़ा कर दीजिए तो खड़ी रहेगी, बसूरते दीगर ढेर हो जाएगी। उन मुनाफिक़ीन की हैसियत भी उन सूखी लकड़ियों से मुख़तलिफ नहीं!

<u>मुनाफिक़ीन की बातिनी कैफियत</u>

आगे फरमाया उन की उस अन्दरूनी कैफियत में जो बुजदिली कमज़ोरी और बेहिम्मती थी उस की ताबीर उस लफ़्ज़ में फरमाई कि जब भी कोई चीख या कोई बुलन्द आवाज़ कान में पड़ती है तो ये लोग समझते है कि हमारी शामत आ गई। दिल ही दिल में लरज़ते और कांपते रहते हैं। सूरह–कियामा की उस आयत के मिसदाक़ कि उन्हें खूब मालूम था कि वह कहाँ खड़े हैं। उनकी असल हक़ीक़त किया है!–क़ुरआन में अगर कोई तम्बीह की जाती तो भी कम अज़ कम वक़्ती तौर पर उन की जान पर बन आती थी, इसलिए कि उनका ज़मीर सचेत कर देता था कि ये है अन्जाम

जिस से तुम दो चार होगे। और हैसियत के लफ्ज़ के हौसले से इशारा कर दिया गया कि कहीं कोई खतरे की घण्टे बजती, यानी किसी तरह से कोई खतरे की आवाज़ सुनाई देती कि कोई लशकर हमलावर होना चाहता है तो खौफ व दहशत से उन की जानें लरज़ने लगती। फरमाया यहाँ हैं असल दुश्मन। ऐ नबी! उन को पहचानिये और उन की साज़िशों से बचने की कोशिश कीजिए। ये जो आसतीन का सांप है उनका डंक बहुत खतरनाक है। लिहाज़ा आप पूरे तौर पर चौकस और मुहतात रहें और उन के तर्ज़े अमल पर नज़र रखिये। आयत के आखिरी हिस्से में फ़रमाया अल्लाह उन्हें हलाक करे, ये कहाँ से लौटाये जारहे हैं! उस में एक हसरत भी है कि कहाँ तक उन की रसाई हुई, ये अपनी खुश बख्ती का तस्वुर करें कि मुहम्मद सल्ल0 के दामन से वाबिस्ता होने का शरफ उन्हें हासिल हुआ, लेकिन बदबख़्त कहाँ तक पहुँच कर वापस जा रहे हैं! –ये किस खुश बख्ती, हिदायत और फ़ौज व फ़लाह की मन्ज़िल के करीब पहुँच कर अब महरूमी की तरफ लौटे जा रहे हैं!!

<u>मुनाफिक़ों की हठ धर्मी और तकब्बुर</u>

अगली आयत में फ़रमाया कि अपने ग़लत तर्ज़े अमल पर पछताने और इसलाहे हाल की जानिब मुतवज्जह होने की अब उन से उम्मीद भी बेकार है। ये चीज़ उस मर्ज़ के आगाज़ में तो होती है लेकिन अब मामला आगे बढ़ चुका है। मर्ज़े निफ़ाक़ अब तीसरी स्टेज में दाखिल हो चुका है। लिहाज़ा उन का हाल ये है कि जब अहले ईमान उन से ये कहते कि तुम से जो गलती हुई है उस के खात्मे के लिए चलो हुज़ूर सल्ल0 की ख़िदमत में हाज़िरी दो और अपनी गलती का ऐतराफ़ कर लो, ताकि अल्लाह के रसूल सल्ल0 तुम्हारे लिए इस्तेगफार करें और अल्लाह से तुम्हारी गलतियों की माफी चाहें तो बजाए इस के कि वह रसूल अल्लाह सल्ल0 की ख़िदमत में हाज़िर हो कर अपनी ग़लती का ऐतराफ़ करें "अपने सरो को मटकाते हैं"–– यानी घमन्ड के

अन्दाज़ में अपने सर को झटक देतें थे। इस लिए कि अन्दर निफाक़ का पौधा पूरी तरह खड़ा हो चुका है और उन की पूरी शख्सियत पर आकास बेल की तरह मुसल्लत हो चुका है। फरमाया "और आप देखते हैं कि वह रूके रह जाते हैं, तकब्बुर करते हुऐ"—— उन के क़दम गोया कि जकड़ दिऐ गऐ हैं। नबी करीम सल्ल0 की खिदमत में आकर गलती का ऐतराफ और इस्तेगफ़ार की दरखवास्त करने से गोया कोई चीज़ उन के क़दमों को रोके हुऐ हैं और ये सब कुछ दर हक़ीक़त तकब्बुर और घमण्ड की वजह से है।

<u>मुनाफिक़ों का हसरत नाक अंजाम</u>

अगली आयत में उस हसरतनाक अंजाम और महरूमी का नक्शा खींचा गया है जो मुनाफिक़ीन का मुकद्दर है। फरमाया कि ऐ नबी! उन मुनाफिक़ों के लिए बराबर है आप उन के लिए इस्तिगफार करें या ना करें, अल्लाह उन्हें हरगिज़ माफ़ नहीं करेगा। गवाही कि आप सल्ल0 का इस्तिगफ़ार भी उन बदबख़्तों के हक़ में मुफ़ीद नहीं। उस से भी ज़्यादा सख्त लफ्ज़ में ये मज़मून सूरह तौबा में दौहराया गया है। वहाँ इज़ाफी तौर पर फ़रमाया कि अगर आप सल्ल0 सत्तर मर्तबा भी उन के लिए इस्तेग़फार फ़रमायेगे तब भी अल्लाह तआला उन को नहीं बख्शे गा। ये बात नोट करने के क़ाबिल है कि मुनाफिक़ीन के बयान में यहाँ वही उस्लूब इख्तियार किया गया है जो सूरह बक़रा के पहले रूकू में पक्के और कटटर काफिरों के लिए मिलता है। वह खुले काफिर जो कुफ्र की आखिरी हदों को पहुचँ चुके थे, जिन के लिए (खतमल्लाह अला कुलूबिहिम) के फैसले का ऐलान हुआ, उन के बारे में सूरह बक़रा में यही लफ्ज़ आते हैं : कि उन काफिरों के हक़ में बिल्कुल बराबर हो चुका है चाहे आप सल्ल0 उन्हें खबरदार फरमायें चाहे न फ़रमाये, अब ये इमान लाने वाले नहीं। वही बात यही मुनाफिक़ीन के बारे में फरमाई गई। गोया मुनाफिक़ीन का शुमार अगर्चे दुनिया में मुसलमानों ही में होता है

लेकिन उन का अन्जाम बदतरीन काफिरों के साथ होगा।

आयत के आख़िरी टुकड़े में इसी कानून को दोहराया गया जो उस से पहले ''सूरह सफ'' में भी बयान हुआ है: "यक़ीनन अल्लाह ऐसे फासिक़ों को हिदायत नहीं देता"––––––ये बात उस को तरीके और उसके ज़ाबते के ख़िलाफ है कि वह किसी को ज़बरदस्ती हिदायत पर ले आए। ज़बरदस्ती हिदायत देनी होती तो फिर कौन होता जो हिदायत से महरूम रह जाता। फिर तो अबू जेहल और अबू लहेब भी हिदायत से महरूम न रहते। अल्लाह तो हिदायत उन्हीं को देता है जो हिदायत चाहते हैं, जो हिदायत के तालिब और ख़्वाहिशमन्द हैं, जो हिदायत के इख़्तियार करने का इरादा रखते हों। जो लोग जान बसकर नाफरमानी के रास्ते पर चल रहे हों उन्हें ज़बरदस्ती हिदायत देना अल्लाह का तरीक़ा नहीं!

अगली दो आयात में अब्दुल्लाह बिन उबई का वह क़ौल नक़ल किया गया जिस से उस की बातिन की गन्दगी झलकती थी। इस तरह गोया तसदीक़ हो गई हज़रत ज़ैद बिन अरक़म रज़ि0 की कि उन्होने अब्दुल्लाह बिन उबई पर जो इलज़ाम लगाया था वह ग़लत नहीं था। फ़रमाया "यही वह लोग हैं कि जो कहते हैं मत ख़र्च करो उन पर जो अल्लाह के रसूल के साथ हैं, यहाँ तक कि बिखर जाऐं!" –– ये लोग तुम्हारे सदक़ात पर पलते रहते हैं। ये सारी गहमा–गहमी और सारा शोर–शरावा दर हक़ीक़त तुम्हारे उस ईसार और इनफ़ाक की बुनियाद पर है। तुम अगर हाथँ रोक लो तो ये सब चलते फिरते नज़र आऐंगे, ये भीड़ छट जाएगी। जवाबन फरमाया "हालाकि हक़ीक़त तो ये है कि आसमानों और ज़मीन के ख़ज़ाने अल्लाह ही के हैं।" यानी ये उन की निरी ख़ाम ख़्याली है कि महाजिरों को रिज़्क़ वह फराहम करते हैं, लेकिन उन मुनाफ़िक़ों को कौन समझाए ये बात इस से पहले आयत 3 के ज़ेल में भी गुज़र चुकी है कि ये लोग फ़हम व शऊर से आरी हो चुके हैं।

अगली आयत में भी अब्दुल्लाह बिन उबई ही का एक क़ौल नक़ल हुआ है। फरमाया "उन्होंने कहा कि अगर इस दफ़ा हम मदीना लौट गए (यानी अगर हम बख़ैर व आफ़ियत वापस पहुँच गए) तो यह बात तयशुदा समझो कि ईज़्ज़त दार लोग (मुराद है अहले मदीना यानी ओस व ख़ज़रज) उन बे वक़त लोगों को (यानी महाजिरीन मक्का) को निकाल कर बाहर करेंगे।" ये रोज़–रोज़ का झगड़ा उसी सूरत में ख़त्म हो सकता है कि मदीना के बाईज़्ज़त बाशिन्दे अपनी सरज़मीन से इन लुटे–पुटे महाजिरीन को बे दख़ल करदें। इस गुसताखी और जसारत पर तम्वीह के अंदाज़ में फ़रमाया "हालांकि हक़ीक़त हाल ये है कि ईज़्ज़त तो कुल की कल अल्लाह के लिए है' उस के रसूल के लिए है और अहले ईमान के लिए है', लेकिन मुनाफिक़ों को इसका इल्म नहीं है।" वह अपनी नादानी में ये समझ रहे हैं कि ईज़्ज़तदार वह ख़ुद हैं, जबकि हक़ीक़त उस के बिल्कुल विपरीत है।

यहाँ उस सूरह मुबारका का पहला रूकू ख़त्म होता है। उस में गोया कि मर्ज़े निफाक़, उस की अलामत, उस का नुक़तये आग़ाज़, उस का सबब उस के मुख़तलिफ मतर्बे व दर्जे, उस की हलाकत खेज़ी, ये तमाम चीज़ें ज़ेरे बहस आ गईं।

दूसरे रूकू की तीन आयात में एक अजीब तर्तीब नज़र आती है। जिस तरह कि तिब में एक मर्ज़ के ईलाज की दो शक्लें हैं। एक हिफाज़ती (Preventive) किस्म का ईलाज है और दूसरा मआलजाती (Curative) तर्ज़ का। यानी एक तो वह तदाबीर हैं कि जिन ये उस मर्ज़ की छूत से बचा सके। और दूसरे ये कि अगर वह मर्ज़ लग जाए, उस की छूत जाए तो फिर उस का इलाज और उस का छुटकारा हासिल करने की तदाबीर की जाती हैं। यहाँ देखिए कि मर्ज़े निफाक़ के ईलाज के ज़िम्न में ये दोनों पहलू सामने आ रहे है।

निफाक़ से बचाओ की हिफाज़ती तदाबीर

दूसरे रूकू की पहली आयत में हिफाज़ती तदबीर का बयान है। फ़रमाया "ऐ अहले ईमान! तुम्हें ग़ाफिल न करदे तुम्हारे माल और तुम्हारी औलाद अल्लाह की याद से।" निफाक़ से बचना चाहते हो तो अल्लाह को कसरत से याद रखो, उस की याद को अपने दिल में ताज़ा रखो। वही ज़िक्रे इलाही जिस के लिए नमाज़ का निज़ाम क़ाइम किया गया, दिन रात में पाँच मर्तबा, अपने मामूलात में से निकल कर ईमान को ताज़ा करते रहो। तजदीदे ईमान और तजदीद अहेद का ये सिलसिला बरक़रार रहना चाहिए। नमाज़ की हर रकअत में सूरह – फ़ातिहा की तिलावत तजदीदे ईमान का निहायत मोअस्सर ज़रिया है। ग़ौर कीजिए (अलहम्दुल्लिाह रब्बिल आलिमीन अरहमानिर्रहीम) से ईमान बिल्लाह की तज्दीद हो गयी (मालिके योमुद्दीन) से ईमान बिल आखिरत नये सिरे से ताज़ा होगा, इयाकनबुदू व इयाका नस्तईन से उस अहद की तजदीद हो गयी जो बन्दे और रब के दरम्यान है। तो नमाज़ दर हक़ीक़त ज़िक्र इलाही की इन्तिहाई असर डालने वाली मुकम्मल सूरह है।लेकिन अस्ल में मक़सूद ये है कि ये केफियात क़ायम रहे, मुस्तकिल रहे।

सूफ़िया ने इस मामले को खुसूसी तौर पर अपना विषय बनाया और उसे अपने आखिरी मन्तक़ी इन्तिहा तक पहुँचाया है। पासे अनफास (हर सांस के साथ अल्लाह निकालो)की मुसलसल मेहनत और मशक्कत से ये कैफियत भी पेदा हो जाती है कि ज़िक्र का मामला हर सांस के साथ ग़फलत में न निकले। शेख सादी रह0 ने बड़े प्यारे अन्दाज़ में इस हक़ीक़त को बयान किया है। उन का कहना है हर सांस जब इन्सान के अन्दर जाती है तो क़ूव्वत का ज़रिया बनती है और जब बाहर निकलती है तो बाइसे सुकून होती है। जिस्म के बहुत से खराब बुखारात और ताप कोले कर वह बाहर निकलता है और इंसान के अन्दरूनी निज़ाम की सफाई का ज़रिया बनता है। शेख सादी रह0

फरमाते है "पस बर हर नफ्स दो शुक्र वाजिब अस्त" कि पस साबित दुआ कि हर सांस पर दो मर्तबा अल्लाह का शुकर लाज़िम है। बहरकैफ इन चीज़ों में कुछ मुबालगा नज़र आऐ तब भी ये बात जान लीजिए कि मुसलसल ज़िक्र के लिए शऊरी कोशिश करते रहना इंसान के लिए ज़रूरी है। उस के लिए कि ये निफाक़ से बचने का एक बाअसर ज़रिया है।

उस से पहले सूरह–जुमा के दर्स में इशारा किया जा रहा है कि दवामे ज़िक्र की एक निहायत मुफ़ीद और क़ाबिले अमल सूरत ये है कि इसान "दुआये मासूरा" की आदत डाले। यानी नबीये अकरम सल्ल0 की वह दुआएँ जो आप सल्ल0 की ज़िन्दगी के मुख़तलिफ़ आमाल व अफ़आल करते हुए मांगा करते थे और इस तरह आप सल्ल0 की ज़ुबान पर अल्लाह का ज़िक्र दुआओं की सूरत में जारी रहता था। रात व दिन के मामलात को अदा करते हुए क़दम क़दम पर हुज़ूर सल्ल0 से दुआ साबित है। आइने में अपनी सूरत है तो साथ ही दुआ ज़ुबान पर आ जाती है, जूते पहन रहे हैं तो दुआ है, सवारी पर दाहिना पाँव आगे बढ़ा कर चढ़ रहे हैं तो दुआ है, उतर रहे हैं तो दुआ है, घर से निकले हैं तो दुआ हैं। गोया कि ज़िन्दगी के हर हर काम को अंजाम देते हुए दुआ की सूरत में अल्लाह की ज़िक्र जारी रहता है। इस से मामलात में हर्गिज कोई ख़लल पैदा नहीं होता, इंसान अपनी ज़िन्दगी की मसरूफियात में मशगूल रहते हुए भी ज़ेहन और क़ल्ब का रिश्ता अल्लाह के साथ बरक़रार रख सकता है।

हुज़ूर सल्ल0 ने फ़रमाया कि शैतान का मामला ये है कि वह इंसान के दिल पर अपनी थुथनी जमाए रखता है जिस से वह वसवसा डालता रहता है। जैसे कि इर्शाद बारी तआला है जब तक इंसान अल्लाह को याद रखता है वह पीछे दुबका रहता है और वसवसा अंदाज़ी नहीं कर सकता। इसी लिए इस आखिरी सूरत में शैतान के लिए "ख़न्नास" का लफ्ज़ आया है। ख़न्नास करते

हैं पीछे हटने को। जब इंसान अल्लाह को याद कर रहा हो, उस का दिल यादे इलाही से आबाद हो तो शैतान पीछे हट जाता है, लेकिन मुनतज़िर रहता है कि जैसे ही दिल पर ग़फलत तारी हो जाए तो वह दिल पर अपना कब्ज़ा जमाए और अपनी थूथनी रख कर फूँकें मारनी शुरू कर दे! लिहाज़ा कोशिश करो कि तुम्हारा कोई वक़्त, कोई लम्हा यादे इलाही से और ज़िक्रे इलाही से ख़ाली न हो। ये मर्ज़े निफाक़ से बचाव की तदबीर ये है वह हिफाज़ती टीका जो निफाक़ की छूत से इंसान को महफूज़ रखेगा।

आयते ज़ेरे बहस के अल्फाज़ को ज़ेहन में लाइयेः यहाँ दो चीज़ों को खास किया गया है कि जो इंसान को अल्लाह की याद से ग़ाफिल करने का बाइस बनती हैं, यानी माल और औलाद। ये वह बात है जो हम सूरह तग़ाबुन में उस से पहले पढ़ चुके है। जबकि हमारे मुन्तख़ब निसाब में सूरह–तग़ाबुन पहले है और सूरह – मुनाफिक़ून का नम्बर बहुत बाद में आता है जबकि क़ुरआन में सूरह–तग़ाबुन इस सूरह–मुनाफ़िक़ून के फौरन बाद आती है। इस ऐतबार से यूँ कहना ज़्यादा मुनासिब होगा कि यही मज़मून आगे चल कर सूरह तग़ाबुन में निहायत वाज़ेह शक़्ल में अल्फाज़ हैः "जान लो तुम्हारे माल और तुम्हारी औलाद ही ज़रिया आज़माइश हैं।" यही तो वह कसोटी है जिस पर तुम्हे परखा जा रहा है। आया उन की मोहब्बत उस दर्जे दिल पर मुसल्लत हो गई है कि सारी भाग दौड़ बस उन्हीं के लिए हो रही है ? या कि अल्लाह की याद दिल में ताज़ा है, अपनी ज़िन्दगी की अस्ल मंजिल यानी आख़िरत ज़ेहन में ताज़ा हैं, अस्ल तवज्जो अपने ख़ालिक़ व मालिक और आक़ा की तरफ़ है ? यही तो वह कसौटी है जिस पर तुम जांचे और परखे जा रहे हो। चुंनाचे खबरदार कर दिया गया कि ऐ अहले ईमान! देखना, तुम्हें या तुम्हारा माल और तुम्हारी औलाद अल्लाह की याद से ग़ाफिल न कर दें।

ये मज़मून उस से पहले सूरेह नूर में भी आ चूका है। वहाँ अल्लाह के

कुछ नेक बंदों की तारीफ़ में मुसबत अंदाज़ में ये बात आई थीः वह जवाँ मर्द, वह बा हिम्मत लोग जिन्हें कोई कारोबारे दुनयवी, कोई तिजारत अल्लाह की याद से ग़ाफिल नहीं करती। और अगर कोई शख़्स उन चीज़ों की मोहब्बत से मग़लूब हो कर अल्लाह की याद से ग़ाफिल हो गया तो उस के बारे में फ़रमाया "यही हैं जो ख़सारा पाने वाले हैं।"

<u>निफ़ाक़ का इलाज : इनफ़ाक़</u>

ये तो हुई हिफाज़ती तदबीर जिस को एक लफ्ज़ में अगर बयान करें तो वह है "दवामें ज़िक्र इलाही!" लेकिन अगर कहीं इस मर्ज़ की छूत लग गई हो तो उस बारे में तजज़िया हम कर चुके हैं उस की रू से उस का अस्ल सबब है माल व दौलते दुनिया की मोहब्बत! यही वह मोहब्बतें हैं जो इंसान को निफ़ाक़ के रास्ते पर डालती हैं। अल्लाह की राह से इंसान अगर रूकता है तो अस्ल में उन्हीं मोहब्बतों की वजह से। लेहाज़ा अब उसका इलाज उसी तौर पर होगा कि माल की मोहब्बत का दिल से खुरचने की कोशिश की जाए। इंसान चाहता है कि इस माल को जो उसे बहुत महबूब है, रोक रोक कर सेंत सेंत कर रखे। सूरह मआरिज में हम पढ़ चुके हैः कि इंसान बहुत ही थड़ दिला पैदा किया गया है, जब उसे तकलीफ पहुँचती है तो वावैला करता है और जब ख़ैर पहुँचता है, माल हाल आता है तो उसे रोक रोक कर रखता है। ये इंसान की तबीअत है। इसी लिए उसके दिल की कली खिलती है। लेहाज़ा फ़रमाया ख़र्च करो उस में से जो हम ने तुम्हें अता किया, ''उस से पहले कि तुम में से किसी की मौत का वक़्त आ पहुँचे।" उस माल को सर्फ करो, उस को खर्च करो, अल्लाह की राह में लगा दो। इस तरह क़ल्ब की सफाई होगी, माल की मोहब्बत का जंग धुलेगा, उसी से तज़किया होगा। सूरह मोमिनून की इब्तिदाई आयात में भी ये मज़मून आ चुका हैः तज़किया अमल, तज़किया नफ़्स और तज़किया बातिन के लिए दर हक़ीक़त सब से मोअस्सर तदबीर

यही है कि उस माल को अल्लाह की राह में लगाओ और ख़र्च करो। इसी का नाम है इनफाक़ फी सबील्लिाह।

यहाँ एक बात और नोट कर लीजिए कि निफाक़ के बारे में आम तसव्वुर तो यही है कि उस से मुराद है इनफ़ाके माल, और कुरआन मजीद में भी अक्सर व बेशतर माल को साफ करने के लिए यही लफ्ज़ इस्तेमाल होता हैं। लेकिन इनफाक़ का लफ्ज़ जैसे कि पहले अर्ज़ किया जा चुका है, आम है और उस के मफ़हूम में ख़ासी वुसअत पायी जाती है। चुनांचे नफ़क़तिद्दराहिम की तरह ''नफ़कल फ़रस'' भी मुस्तमल है। गोया किसी काम में अपनी जान, अपनी सलाहियतों और कूव्वतों को खपाना और अवक़ात का सर्फ करना, इनफाक़ का लफ्ज़ इन सब को मुहीत है। इस लिए कि रिज़्क भी एक निहायत वसीअ इस्तिलाह है। इंसान को जो कुछ दिया गया है वह उस का रिज्क़ है। उसका नसीब, उसकी ज़िहानत, उसकी सलाहियतें ये सब रिज़्क में शामिल हैं। कोई भाग दौड़ ज़्यादा कर सकता है, कोई मनसूबा बंदी बेहतर कर सकता है।

आज के दौर में इल्म मआशियात ने जो वुसअत इख्तियार की है, उसके ऐतबार से अब से बात मारूम है कि ये सब चीज़ें Capital यानी सरमाया शुमार होती हैं, उन्हीं सलाहियतों से तो सरमाया कमाया जाता है। ये Inter convertible हैं। लेहाज़ा इनफाक़े माल में बज़्ले नफ़्स यानी इनफाके नफ़्स भी शामिल है। जो कुछ इंसान को दिया गया है उस में से एक क़ाबिले ज़िक्र हिस्सा अल्लाह की राह में लगाए और खपाए। ये गोया कि इलाज बिज़्ज़िद है कि जिस चीज़ से मोहब्बत है उसी को खर्च करो और अल्लाह के रास्ते में लगादो।

यहाँ बात चौथे पारे के आग़ाज़ में बयान हुई है कि तुम नेकियां और वफ़ादारी का मुक़ाम हासिल कर ही नहीं सकते जब तक कि खर्च न करो वह

चीज़ जो तुम्हें महबूब है,जिसे तुम पंसद करते हो।यहाँ बात आयत–उल–बिर में एक मुख़्तलिफ अंदाज़ में बयान हुई है कि इंसान माल को खर्च करे उस की मुहब्बत के बर खिलाफ़।

<u>मौत के वक्त हसरत</u>

यहाँ सूरह मुनाफ़िक़ून के अखिरी हिस्से में नक़्शा खींचा गया है कि एक बड़ा हश्र का वक़्त आऐगा जब इंसान पछतायेगा कि ऐ काश! में उस माल को अल्लाह की राह में सदक़ा कर सकता। आज ये लोग दोनों हाथों से माल जमा कर रहें हैं, घरों की चमक–दमक पर बे तहाशा पैसा खर्च हो रहा है, उन में नामालूम कहाँ कहाँ से फरनीचर और कराकरी जमा की गई हैं, ये सब चीज़ें इंसान को बड़ी महबूब हैं (सू0 तौबा : 24) लेकिन एक वक़्त आऐगा जिस के बारे में सूरह क़ियामा में हम पढ़ चुके हैं कि वह वक़्त जुदाई का वक़्त होगा। माल व दौलत और जायेदाद सब को छोड़ कर जाना होगा, यहाँ से निकलना होगा, अपने अज़ाज़ों और रिशतेदारों से भी ताल्लुक टूट जायगा, अहलो व अयाल से भी जुदा होना पड़ेगा, उस वक़्त इंसान हसरत से कहेगा कि ऐ रब! क्यों न तूने मुझे ज़रा और मोहलत दे दी! तूँ अगर ज़रा इस वक़्त को टाल दे तो फिर में ये सब कुछ तेरी राह में दे दूँ, सारा माल सदक़ा करदूँ और में बिल्कुल सच्चाई और सदाक़त की राह इख्तियार करलूँ। काश मुझे थोड़ी सी मोहलत और मिल जाती तो में नेक लोगों में से हो जाता!! उस वक़्त बस यही एक हसरत होगी, लेकिन उस का कोई नतीजा बरामद नहीं होगा। इस लिए कि अल्लाह की ये सुन्नत साबित है कि जब किसी का वक़्ते मौत आ जाऐ तो फिर उसे टाला नहीं जाता। इम्तेहान का वक़्त खत्म हो चुका, अब तो नतीजे के निकलने का इन्तेज़ार करे!– और आखिरी तम्बीह करदी गई कि "अल्लाह जानता है जो कुछ कि तुम करते हो।" उस वक़्त का रोना–धोना और चीख पुकार भी फिल हक़ीक़त मुनाफिक़ाना होगी। अगर कहीं कोई

मोहलत मिल भी जाए तो फिर दुबारा माल की मुहब्बत भर जायेगी और फिर तुम अल्लाह की राह में खर्च करने से टाल मटोल करोगे।

मुनाफ़क़त से मुताल्लिक़ बुनियादी और तमहीदी मबाहिस पर गुफ्तगू करते हुये हम ने सूरह–तौबा की वह आयत पढ़ी थी जिस में वज़ाहत से नक़्शा खींचा गया है कि कुछ लोग हैं कि जो ये दुआ करते हैं कि अल्लाह अगर हमें कुशादगी अता फरमाऐ और माल व दौलत से नवाज़े तो हम उस की राह में सदक़ा व खैरात करेंगे, लेकिन जब अल्लाह ने उन्हें वह सब कुछ दे दिया जो उन्होनें मांगा था तो अब वह उस में बुख्ल से काम ले रहा हैं और अल्लाह की राह में सदक़ा व खैरात पर आमादा नही है। फ़रमाया तो उस बदअहदी को जुर्म में अल्लाह तआला ने उन के दौलत में निफाक़ पैदा कर दिया। तो अल्लाह उन मुनाफिक़ीन के ज़ाहिर और बातिन दोनों से वाक़िफ है। वह जानता है कि अगर कही बिलफर्ज़ उन्हें मोहलत मिल जाऐ तो फिर भी ये वही कुछ करेंगे। जैसे कि सूरह–अनआम में फ़रमाया कि अगर उन को लौटा दिया जाऐ, एक मौक़ा और दे दिया जाऐ तब भी ये उन हर्कतों से नहीं रूकेंगे जिन से उन्हें रोका जाता है। यक़ीनन ये अपने दावे में झूठे हैं।